स्तोत्र पदसंग्रह भक्तामर

स्तोत्रपदे

द्रु१८वांरसोमवार दिनसंपूर्णछ ॥

लकरणं॥ मनवचनकायलवल्याय निनभागचंद वंदनचरण॥२॥ गोया
चलके निकट सिंधिया नृपनिकटकवर॥ जैनिजैन बहुवसइ जहां जिन र
भक्ति भावनर॥ तिनमैं तेरहपंथ गोष्ट राजत विसीष्ट अति॥ पार्श्वनाथर
जिनधाम रच्यो जिन सुभउतंग अति॥ नहा देसवचनकारुपयह भागचं
रचना करीय जयवंत होउ सतसंग नित जा प्रसाद बुद्धि थिरतरिय॥३॥

दोहा॥ संवसर गुणइससे॥ द्वादस उपरि धार॥ दोज कृष्ण आसाढकि
पूर्णवचनिका सार॥४॥ इतिश्री उपदेस सिद्धांत रत्नमा सपूर्णं० लखी
तं गंगाराम भवानचंद गाम अष्टी सवंत १८३३ फाल्गुण शु

मर्मीका संयोग होनेसंते सम्यक्त्व लभ होय॥ अथवा जहसहलं है म
णूपतं ऐसा भी पाटहै॥ ताका यह अर्थ है॥ जो मनुष्यपना सफल होय तैसे
करहु॥ गाथा॥ एवं भंडरियण मिचंद रइया विकइ विगाहाउ॥ विहिमगा
रयाभव्या॥ पटतूजाणंतु जंतु शिवं॥ १६१॥ अर्थ॥ या प्रकार भंडारि नेमिचंद
करि इरचित कछु इकगाथा है॥ तिन ही भव्यजीव हैते पठउ॥ कल्याणकों
प्राप्ती होहु॥ कैसो है भव्य आचरणके मारग विस्वरत है॥ यथार्थ आच
रणमैं तत्पर है॥ ऐसे उपदेश सीद्धांत रत्नमाला नाम ग्रंथके गाथासूत्र
न कि वचनका समाप्त भई॥ इस ग्रंथकि संस्कृत टीका तो थी नहीं॥ परंतू
कछु टिपण था॥ ताते विधि मिलाय मेरि बुद्धिमे प्रतिभासा ते सा अ

थ लिष्यो है॥ कहि भुलि अवश्य होयगी॥ सो बुद्धिवान सोधि लिज्यो आ-
म्नाय विरुद्ध अर्थ तौ मैंने लिष्या नाहि॥ परंतु गाथाके कर्त्ताका अभिप्रा-
य अर भि होय तो समज लिज्यो॥ सवैया॥ ३१॥ रागादिक दोष जामे पाइए
कुदेव सोय ताको त्यागी वीतराग देव उर लाइए॥ वस्त्रादिक ग्रंथधारी कु-
गुरु विचारि तिन्हे गुरु निर्ग्रंथको यथार्थ रूप ध्याइए॥ हिंसामइ कर्म सो
कुधर्म जांनि दुरी त्यागे दयामय धर्म नाहि निसदिन गाइए॥ १॥ छप्पै॥
सम्यक्त श्री अरिहंत संत जिय चिंतत दायक॥ मंगल सिद्ध समूह ज्ञाक-
ल ज्ञाया क्रत ज्ञायक॥ मंगल सुरमहंत सूरि गुणवंत विमल मति॥ उपाध्या
य सिद्धांत पाठ कारक प्रविन अति निजरूप साधन करत साधु परम मंग

करि भी या वत आमाने देषिए है॥ ताहनाइ श्रावकपनाके से होय॥ कैसा है
श्रावकपना जो धिर पुरुषनि करि आचर्या है॥ भावा॥ प्रथम जिनवाणीके
अनुस्वार अमजानि होय॥ पीछे श्रावकके वा मुनिके व्रत धारे यह रीति है
तातैं जे आमज्ञानी नाहि तीनके साचा श्रावकपना नांही॥ ऐसा जानना॥
॥गाथा॥ जय विद्दु उत्तमसावय॥ पयडिय चडण करण असमत्थो॥ तह
वि पहु विय ण करणो॥ मणोरहो मज्झ हियम्मि॥ १५६॥ अर्थ॥ यद्यपि मे
उत्तम श्रावक किये ईर्यादिक चडनेको असमर्थ हूं॥ तथापि जिनवचनन करणे
मे मेरे हृदय विषे मनोहर वर्तेहै॥ भावार्थ॥ सक्ति के हिनपना ते उत्कृष्ट व्रत
ने धारसकूं हूं तो भि मेरे जीनाज्ञा प्रमाण धर्म धारणेकी लालसा है॥ ऐसे

यमांन होयहै।।नयनाउ सो गाटि जो मोह मी थ्यात्वरूप गाट का षोटा महास
है।।गाथा।।जिनवचन पायकरि भी जो हित अहित का ज्ञान न भया तो ज्ञान
नी यांके तिव्र मिथ्यात्व का उदय है।।गाथा।।बंधन मरण भयाइ दुहाइं तिर
काइ ण यदुरकाउ।।दुरकाणउ हा णी हाणं।।यणसायणकारणं।।१५४
।।अर्थ।।इस लोक मै बंधन अर मरण का भय है।।अर तिव्र दुष है ते दुषनां
ही।।दुषनिका निधान तो जिनवचन की विराधना करणा अनंत भव मै दुष
दाउ है।।ताते जिनाज्ञा भंग करणा महा दुषदाई है ऐसा ज्ञानना।।गाथा।।प हु
वयण विहर हस्सं णाउ णा।।विज्जावरिसए अप्पा ताकहा।।सुसावगत्तं
चिणं धीरपुरसेही।।१५५।।अर्थ।।जिनवचन का विधान का रहस्य जांनि

सुष का मुल विवेक है।।सो विवेक श्री गुरनिके प्रसाद ते होय है।।अर इस का
ल मै श्री गुरनिका निमंत मिलना ही कठीन तो सुष के से होय।।गाथा।।जं जि वि
य मित्तं पिहु धरे।।मिणं म पिसवयाणं।।वन्नं पिपहु माह बुज्जं।।इह विसमे दुस
मे कालं।।१५९।।अर्थ।।इस विषम पंचम काल विषै जो मै जिवमात्र धरहुं सो
भी है म्हारो महा आश्चर्य है।।गाथा।।इस काल मै मिथ्यात्व कि प्रवृति बहुत है
ताते हम जिवै है।।अर श्रावक कहावे है सो भी आश्चर्य।।ऐसे श्रावकपने की
इस काल मै दुर्लभता दिषावे है।।गाथा।।परिभावीउण एवं।।तह सू गुरु करि
ज्ज अह्म सामित्तं।।पहुसा मागी सुजोगे।।जह सुलहं होउ समत्तं।।१६०।।अर्थ
ऐसे विचारि करि हे सुगुरो हे प्रभो हमारा स्वामिपनां ते से करहुं।।जैसे सा ५४

ग्रंथकारनैभावनाभाईहै॥गाथा॥नापहुपणमिएचरणे॥इच्छं पत्थेमिपरमभा
वेण॥तुह्वयणरयणगहणे॥अइलोहोहुज्जमुज्जस्सया॥१५७॥अर्थ॥
गोतेहेप्रभोतुम्हारेचरणनिकोमैनमस्कारकरिकै,मेपरमभावकरिकै
एप्रर्थनाकरुहुं॥जोतेरेवचनरूपरत्ननिकेग्रहणविषैमेरेसदाअतिलो
भहोउ॥ऐसेग्रंथकारनैद्रव्यप्रार्थनाकरीहै॥गाथा॥इ[illegible]हमीछेवासणि
ष्कितं॥भावउगलिषगुरुविवेयाणं॥अम्हाणकहसुहाउ॥संभाविज्जंति
सुविणे॥१५८॥अर्थ॥इसपंचमकालविषैमिथ्यात्वकाटिकानाजोनि
कृष्टभावतातेनष्टभयाहै॥महाविवेकजिनका॥अथवागुरुनिकाविवे
क,जिनकेऐसेजेहमतिनकौस्वपूरवीषैभीसुषकैसेसंभावनाकरिए॥

जिनमततोअलौकीकहै॥नाहिवंदेहैतोमिथ्यादृष्टिनकौरीतिमतीमानेऐ
सेज्ञानना॥१४९॥गाथा॥जेमणेविजिणिंदं पुणोविपणमंतियरदेवाणं
मिछत्तसणिवइयं॥यत्थाणंनाणकोविज्जा॥१४९॥अर्थ॥जेजीवजिनरा
कोमानिकरिभीफेरओर॥विष्नु॥महेस॥भैरव॥क्षेत्रपाल॥देवि॥इत्यादिदेव
निकोनमस्कारकरैहै॥तिनमिथ्यात्वसंनिपातकरियहस्तजीवनिकाको
नवेघहै॥भावार्थ॥अन्यजीवतौमिथ्यादृष्टिहै॥परंतुजेजैनीहोयकैअन्यरा
गादिदोषसहितदेवनिकोवंदेहेपूजैहै॥तोमाहामिथ्यादृष्टीहै॥मिथ्या
त्वकेनासकाउपायजिनमतहै॥बहुरिजिनमतपायकरिभीजिनकामिथ्या
त्वभावनहिंजाय॥तोफेरताकाउपायनाहीं॥गाथा॥एगोसुगुरुएगा॥वि ५१

आउ अहिउ बंधु सुयाइ सुजाणः अणुराउ ॥ ते सिणह सम्मत्तं ॥ विणियंस
मणणीइएण ॥ १४७ ॥ अर्थ ॥ जिनकै साधर्मिनीनैनो अहित होय ॥ अरुबं
धुपूजादिकनै अनुरागहै ॥ तिनकै सीद्धांतके न्यायकरि प्रगटपनै शम्यक्त
न जाननां ॥ भावार्थ ॥ सम्यक्तके अंग तौ वात्सल्यादि आवैहै सो जाकै सा
धर्मिननै प्रितीनांही ॥ तिनकै सम्यक्त नांही ॥ पूजादिकतें प्रीतीतो मोहकै उद
यतै सबहिनकै होयहै तामैं कछू सार नांही ऐसा जाननां ॥ गाथा ॥ जउ जा
णसी जिणहो ॥ लोयायारव्व परकयहुउ तोतं ॥ मण्णंतो कहमणि सिलोए ।
आयारं ॥ १४८ ॥ अर्थ ॥ जो तूं लोकाचारतें बाहीर भुत जिनराजकों जानै
है ॥ तो ता जिनराजकों मानतासंता लोकाचारकौं कैसें मांनैहै ॥ भावार्थ ॥

वदयमेउ ॥ चियभवणसद्दगाणं ॥ साहारणदव्वमाइणं ॥ १५२ ॥ अर्थ ॥ ज्याके
वचनमें जिनमंदिर ॥ अरश्रावक अरपंच्यायतिद्रव्यइत्यादिकनमैं भेदबर
तावैहै सो जुगप्रधान गुरु नांही ॥ भावार्थ ॥ केई वेसदासी स्वेतांबरस्काबर
अदहै ॥ तिके कहैहै जो यहु हमारा मंदिर है ॥ एह हमारा मंदिर है ॥ एह हमारे श्रा
वक है ॥ एहु हमारे द्रव्य है ॥ एंचेत्यालयादि हमारे नांही ॥ ऐसें मानैहैं ते ।
गुरु नांही ॥ गुरु तौ बाह्याभ्यंतर परिग्रहरहित वितरागहै तेई है ॥ ऐसा ता
त्पर्य है सो जाननां ॥ गाथा ॥ सपइ यहुवयणेन ॥ विज्जावणउ लुस्सइ विहि
विवे ॥ पत्तंत नियडमोहा ॥ मिच्छत गंडियादुइ माहप्पं ॥ १५३ ॥ अर्थ ॥ अबा
रहि जिनराजके वचन करी भीहीना हितका विवेकपनालवनांउ हूलसा

आउ अहिउ बंधुसुयाउसुजाणः अणूराउ॥ ते सिणहसम्मत्तं॥ विणेयंस
मणीउण॥१४७॥ अर्थ॥ जिनवै साधर्मिनीनैनो अहित होय॥ अरु बं
धुपूजादिकतै अनुराग है॥ तिनकै सीद्धांतके न्यायकरि प्रगटपनै शम्यक्त
न जाननां॥ भावार्थ॥ सम्यक्तके अंगनि वात्सल्यादिभाव है॥ सो जाकै सा
धर्मिननै प्रितीनां है॥ तिनकै सम्यक्त नाही॥ पूजादिकतै प्रीती तो मेहके उद
यतै सबहिनकै होय है तामैं कछू सार नाही ऐसा जाननां॥ गाथा॥ जउजा
णसी जिणहो॥ लोयायारव्वपरवुयहुउतोते॥ मणं तो कहमणिसि लोए
आयारं॥१४८॥ अर्थ॥ जो तूं लोकाचारतै बाहिर भुत जिनराजकौ जानै
है॥ तो ता जिनराजकौ मानता संता लोकाचारकौं कैसे मानै है॥ भावार्थ॥

वदयभेउ॥ चियभवणसहगाणं॥ साहारणदव्वमाइणं॥१५२॥ अर्थ॥ ज्याके
वचनमै जिनमंदिर॥ अरु श्रावक अरु पंचायतिद्रव्य इत्यादिकनमै भेदबु
तावै है सो जुगप्रधान गुरु नाही॥ भावार्थ॥ केइ भेसदासी श्वेतांबर रक्तांबर
अदहै॥ तिकहै है जो यहु हमारा मंदिर है॥ एह हमारा मंदिर है॥ एह हमारे श्रा
वक है॥ एहु हमारे द्रव्य है॥ पंचै स्याल ल्यादि हमारे नाही॥ ऐसे मानै है तं
गुरु नाही॥ गुरु तौ बाह्याभ्यंतर परियहरहित वितराग है ते इ है॥ ऐसा ता
त्पर्य है सो जाननां॥ गाथा॥ सपइयहुवयणेन॥ विज्ञावणउल्लुसइविहि
विवे॥ यतंतनिवडमोहा॥ मिछत्तगंडियादुउ माहप्पं॥१५३॥ अर्थ॥ अबा
रहि जिनराजके वचनकरी भी हीना हितका विवेकपना लवनांउ हूउसा

सावगोचेइयाइ विविहाणी॥ नत्थयत्तं जिणदव्वं परंतणं छिज्जंति॥ १५०॥
तेण गुरुणो सहाणा॥ पुउउ हेडइ ते हि जिणाणाहे॥ १५१॥ अर्थ॥ बहुरि जे नि
र्ग्रंथ गुरु तै सर्व णष्ट हे॥ अर श्रावक भी णष्ट हे॥ अर नाना प्रकार चैत्यक हीए
जिन बिंबनै णष्ट हे॥ तहां जे जिनद्रव्य जो चैत्यालय का द्रव्य परस्पर नष्ट चैंहे
ते गुरु है नाही॥ अर श्रावक भी नांही॥ अर जिन करि जिनराज पूजा नाही॥ ति
न मुढ जिवनि की मिथ्या परणति ज्ञान आज्ञा तिन करी जाणी ये है॥ भावार्थ
केइ जिव चैत्यालया दिक में भेद माने हे॥ यो चैत्यालय आदि हमारे हे॥ ऐसे प
रके हैं ऐसा मांनि परस्पर लडि नष्ट करै है॥ धन नष्ट चैहे॥ ते मिथ्यादृष्टि है॥ जा
ते जिनमात कियहु रितनाही॥ गाथा॥ सो णगुरु जुगपवरो॥ जस्स यवयण मि

लहेसु वणरयणाउ वत्थुवित्थारं॥ णिच्छंचि अमेलावसु मग्गणीरयाण
अइदुलहं॥ १५३॥ अर्थ॥ जगत विषै सुवर्ण रत्न आदि वस्तु निका विस्तार
सर्व ही सुलभ है॥ बहुरि जे सुमार्ग मे रहत हे॥ जिन मार्ग मे यथार्थ प्रवर्ते हे
तिनका मिलाप निश्चय करी नियही दुर्लभ है॥ गाथा॥ अहिमाणविसो
पसमत्थं॥ पंचथुव्वं तिदेवगुरुणोण॥ नेहपिजउमाणा॥ हाहातंपुव्वदुच्चरि
यं॥ १५४॥ अर्थ॥ अभिमान विषै के उपसमावने के अर्थ अर्हंत देव बानि
र्ग्रंथ गुरु निका स्तवन करिए हे॥ गुण गाइए हे॥ बहुरि तिन करि भी जो मान
पाष नासो हाय हाय हे पूर्व पापका उदय है॥ भावार्थ॥ अरहंता दिक वीत
राग है॥ तिनकौं सेवना दिक ते माना दिक पाय निकी हीनता होय है॥ बहु ४०

९ भावबहुतजननके प्रवाहरूपहै॥ अनेकज्ञानिजीवतेसेही मानैहै गुरुकै
निमीततै बुद्धिवानकोभीबुद्धिचलिजायहै॥ ताते तिनका निमित्त मिलना
योग्यनाही॥ गाथा॥ जणिज्ञम्मिछदिट्टि॥ जेपडणालंवणाउगीहहंति॥ तेपु
णसमंनेदिट्टि॥ तेसीमिणिणवुणपयडीय॥ १४२॥ अर्थ॥ जे जिव यतना
लंवनकहिए निचापडनेरूप आलंवनको गहैहै॥ ते जिव मिथ्यादृष्टिही
है ऐसा तूजांने॥ बहुरितेसम्यगदृष्टीहै जिनकामनउपरिरूपसीदिविषे
है॥ भावा॰ जे जिव अणव्रतादि महाव्रतादिरूपउपरिलीदसाकोत्यागीनिच
लीदशा जिनकोंरुचेहै॥ ते मिथ्यादृष्टि॥ बहुरि सम्यक्तादिउपरउपरधर्मधार
णेका जिनका भाव है॥ ते सम्यग्दृष्टी है ऐसा जाननां॥ गाथा॥ सव्वंपिजणसुर

दि आरभिलोकनिसैउलटीरीतीजेनिनी कीहै॥ तहालोकीक ज्ञो कुदेवादि
कके पूज्यनादीककी प्रवृत्ति यकैरै॥ सो जिनकाहेका ऐसा तात्पर्य यजाननां॥
गाथा॥ जं चियलोउमणइ ते॥ चियमणं तिसयललोयावि॥ जंमणइ जि
णणाहो ते॥ चियमणंति किवि विरला॥ १४६॥ अर्थ॥ जो हि निश्चय यकर
रि अज्ञानीलोक मानैहै॥ ताको ते सर्वलोक मानै हीहै॥ परंतू ज्ञाहि जिनरा
ज मानैहै॥ ताहीकोउ विरले जीव मानै है॥ भावार्थ॥ अज्ञानिकोधनधा
न्यादिक उत्कृष्ट भासैहै॥ सोतो सर्वही मोही जिवनिकोस्वमेवउत्कृष्ट भा
सैहीहै॥ परंतू वितराग भावको हित माननेवाले थोरेहै॥ जाते जिनके निक
ट संसार है मोह मंद होयतीनहीको वितरागतारूचैहै॥ गाथा॥ साहम्मि १०

रि जे अर्हंतादिक कहीतें उलटा मानादिक पोषै ॥ जो हम बडे महै बडे ज्ञानी हैं ॥ हमारा बडा चैत्यालय है ॥ तिनका बडा आग्रह है ॥ गाथा ॥ जो जिण आयरणाय ॥ लोगुण मिलइ जस्स आयारो ॥ हा हा मूढ करेतो ॥ अप्पं कह भणसी जिण यण सं ॥ १४० ॥ अर्थ ॥ ज्यो जीव जिनराजके आचरण विषे प्रवर्तें है ॥ ताके आचार विषे लोक नहीं मीलें है ॥ सो हा यह्य मूढ जीव लोकाचार करतें संतें आपकों जैनि के सेवक कहै है ॥ भावार्थ ॥ जे जिन की आ[illegible] कीकरी तिहायहै ॥ सो उदिषाउए है ॥ जे निर्वीतराग देव मानें है ॥ लोक सरागी देव मानें है ॥ जे निपरिग्रह होत गुरु मानें है ॥ लोक परिग्रह सहित गुरु मानें है ॥ जे निर्दयामइ धर्म मानें है ॥ लोक यज्ञादि हिंसा मे धर्म मानें है ॥ इत्या-

दिरूप सोइ जांनना लो है ॥ जाते जिनमत की स्थिरता बनि रहै ॥ तो परंपराय साचा धर्म सो भी मीलीजाय ॥ बहुरि व्यवहार धर्म भी न होय तो पापप्रवर्त्ति होनेतें निगोदादि चलै जाय ॥ तहा धर्म की वार्ता भी दुर्लभ है ॥ ताते परमार्थ ज्ञानने की सत्कान हि होय तो व्यवहार ज्ञान नाही भलो है ॥ ऐसा जाननां ॥ गाथा ॥ जम्मा जिणेहि भणियं ॥ सुय व्यवहारं विसोहयं तस्स ॥ जाउ ये विसुद्ध बोही ॥ जिण आणाराहगत्ताउ ॥ १४१ ॥ अर्थ ॥ जाते जिनराजने कह्या सो शास्त्र का व्यवहार सो ना परमार्थ धर्म का सोधनवाला है ॥ परमार्थ का स्वरूप न्यारा दिषावे है ॥ बहुरि जिनराज की आज्ञा के धारकपनेतें निरमल बोध कहिए दर्शन ज्ञान चारित्र की एकता सो उपजे है ॥ भावार्थ ॥

जइ पत्तो अइणपत्तोण॥ नह विज्जसो महाशरणं॥ सपइ जो जुगपहाण
गुरु॥१३६॥ अर्थ॥

॥गाथा॥ जिणधम्मं दुण्णेयं॥ अइसयणाणीहि णज्जउ सम्मं॥ नह विदु स
मयहिइण॥ ववहारनयण णायव्वं॥१३७॥ अर्थ॥ बडे ज्ञाननकरि भी जो
यथार्थ जिनधर्म कष्टकरि ज्ञाननायोग्य है॥ तो भी मतिकी स्थिरताके अर्थ
व्यवहारनयकरी जाननायोग्य है॥ भावार्थ॥ निश्चयकरि मोहरहित आ
त्माकी परणतीरूप जिनधर्म तो बडे ज्ञानिकरि भी जाननाकठिण है॥ ताका
लाभ होणा तो कठिण है दुर्लभ है॥ तो व्यवहारधर्म अर्हंतादिकके श्रद्धा॥

जो आचार्य है सो मध्यस्थ मनकरि पक्षपातरहीन होयकरी॥ अर शास्त्र
दृष्टीकरि लोकप्रभावकों त्याग भले प्रकार परषना योग्य है॥ भावार्थ॥ ह
मारे ते ऐही गुरु है॥ हमकों गुणदोषवीचारवेनें कहा प्रयोजन है॥ ऐसा प
क्षपात त्यागकें शास्त्रमैं जैसे गुणकों गुणदोषकहें है॥ तैसे विचारकरि गु
रु माननायोग्य है॥ गाथा॥ संपइ दुसमसमए॥ णामायरिएहि जणिए
जेण मोहा॥ सुद्धधम्माउ णीउण॥ चलंति बहुजणयया हाउ॥१४१॥ अर्थ॥
आवारउ सदुषमाकालविषे॥ नांमाचार्यकहीए आचार्यके गुण तो जि
नमें नाही ऐर आचार्यकहावे है॥ तिनकरि उपजाया जो लोकमें गहला भाव
तानें निपुणपुरुषभी सुद्धधर्मतें चले है॥ और तो चले ही चले॥ कैसा है गहला

व्यवहार है सो निश्चय का साधक है॥ ताते शास्त्राभ्यासरूप व्यवहार र
तें परमार्थरूप वीतरागका धर्मकी प्राप्ति होय है॥ आगें सो जानना ॥गाथा॥
जत्ते दिसंति गुरु समय॥ परिक्खा इजे ण॥ बुज्झं निपूणणं सद्दहणं जा
यणं चरणं॥१३९॥ अर्थ॥ जे जे लोकमें गुरु दीषे है गुरु कहावे है॥ तें तें
शास्त्रकी परिक्षा करि न पूजिए है॥ शास्त्रान, गुण जामें न दिसे है जे न पूज
नां॥ बहुरि एक श्रद्धान करणं ही करी नें है॥ तो ज्ञान जीव चारीत्र धारणा
तो करि गेणि हि है॥ तातैं चारीत्र के धारी है ते ही पूज्य है॥ आगें सो गाथा का भाव
जाणना॥ गाथा॥ ताए गोयुगपवरो॥ हुत्थमणेहिं समय दिठो॥ गस्स म्मंप
रिखिय हो॥ मूनूणमवाह हलवोलं॥१४०॥ अर्थ॥ ताते एक युगप्रधान

मिलै नाही॥ तैसे ही जिनदेवको आराधे है॥ तो तिनकी आज्ञा प्रमाण करणां
कदाचि आज्ञा प्रमाण करेगा तो॥ आराधनाका फल मोक्षमार्ग आवना दुर्ल
भ है॥ गाथा॥ दुसमदंडे लोए सुदुःरक सिद्ध॥ मिदुह उदयम्मि॥ धण्णा णजा
ण ण चलइ॥ सम्मत्तं ताण य णमामि॥१४३॥ अर्थ॥ दुषी है भ्रष्ट पूरुष जेनी
लोकजामे॥ अरदुष्ट निका है उदय जाविषे ऐसे पंचम कालके दंडेस हित
लोक विषे जिन ज्ञाऽण्यवानन कु सम्यक्त नें चलै है॥ तिनको मेन मस्कार क
रो हो॥ भावार्थ॥ इस निकृष्ट कालमें शास्त्र विगडनेके कारण अनेक है॥ बि
गडरहे है तिनमेंभी चलीत नहि होय है सो धन्य है॥ आगें गुरुनकि परिक्षा
करणेका उपाव कहे है॥ गाथा॥ णिएमइ अणूसारेणं॥ ववहारण ये नस ४५

जाकोंतुप्रितिकरिवंदेहेपूजेहे॥ अरताहीकेवचनकीहीलनाकरेहै॥ सोजि
नराजकेवचनमैकह्यासोंभीनमानेहे॥ तोकहावंदेपूजेहे॥ भावार्थ॥ कोइजीव
बाह्यजिनराजकीपूजावंदनातोबहुतकरेहे॥ अरताकेवचनकोमानेनाही
तोताकौवंदनापूजनाकार्यकारीनाही॥ गाथा॥ लोएविइमसुणीयं॥ आरा
हिज्जांनंणकोविरुज्जा॥ मणिज्जतस्सवयणं॥ जइइच्छसिइछियंकाउं॥ २३४॥
॥ अर्थ॥ लोकमैभीऐसासुनिएहे॥ जाजाकोआराधियसेइएताकोकोपि
तुनकिज्जिएजोवांछितकरणेकोचाहेहेतोताकावचनमानिए॥ भावार्थ
लोकमेभीयहुप्रसीद्धहे॥ जोकोइराजादिककोसेवेअरताकेफलचाहे॥ तो
ताकीआज्ञाप्रमाणकरे॥ अरसेवातोकरेअरआज्ञाताकीनमानैतोफल

महाहूताहीतिनमेपाइएनाही॥ अरआपकोगुरुमानेतेकुगुरहे॥ ऐसाजा
नना॥ गाथा॥ नहविदुणिएजइपाए॥ कम्मंगुरुत्तसंणवची॥ ससिमोधण
णकयत्थाणं॥ शूद्धगुरुमिलइपूणेणं॥ २३५॥ अर्थ॥ जैसेपरिक्षाकरेहैतो
भीकर्मकेतीव्रउदयतेअपणीअज्ञानताकरीगुरुनकाहमविश्वासनाही
करेहे॥ निश्चयनाहीकरेहे॥ सोभाग्यवानकृतार्थजीवनिकोपुण्यकेउद
यकरीशूद्धगुरुमिलेहे॥ भावार्थ॥ साचेगुरुकामीलनासहजनाहीजाका
भलाहोणाहरहोयताकोगुरुनिकासंयोगमिलेहे॥ हमआज्ञानीभाग्यही
नतिनकेगुरुनिकानिश्चयकैसेहोय॥ ऐसेअपकीनिंदापूर्वकगुरुनिके
उत्कृष्टपनेकीभावनाहे॥ ऐसाजाननां॥ गाथा॥ अहयंपुणाअउतो॥ ता

मयसुद्धिए॥कालखेत्तेणुमाणे॥परिरकीऊंजाणिऊंसुगुरु॥१३४॥अर्थ
आपणीबुद्धिकेअनुसारव्यवहारनयकरीसीद्धांतकीसुद्धिकरी॥काल
क्षेत्रकेअनुमानकरिपरिक्षाकरीकरेकेसुगुरुनिकोजानहु॥भावार्थ॥रत्न
त्रयनिकोसाधकपनोसाधुकोलक्षणहै॥सोनिश्चयदृष्टिकरिअंतरंग
तोदिसतानाही॥परंतुव्यवहारनयकरिसिद्धांतमेमहाव्रतादिआचर
णकस्याहै॥ताकरिपरखत्ताजेउनमेपाइएहैतेगुरुहै॥उनमेनपाइएतेकु
रुहै॥बहुरिएसाकालमेक्षेत्रमेगुरुनिकाआचरणबनेहै॥एसेंकालक्षेत्र
मेनबणेहै॥एसाविचारकरिगुणीरुनियोग्यकालक्षेत्रजामेजहांपंचमहा
व्रतादिदिखैसेतेगुरुहै॥अरगुरुनयोग्यक्षेत्रकालनाहीतहांतिष्ठे॥अरपंच

धर्मवचननीकरिसमुझेहै॥अपीतुनाहीसमुझेहै॥तातेतिनकेसमझवनेकेअ
र्थगुणवानपुरुषहै॥तेनिरर्थकआमाकोदमैहैकष्टकरेहै॥भावार्थ॥विप
र्ययरत्नकोउपदसदेनेमेकछुसारनाही॥तातेवीपर्ययरत्नसुमध्यस्थरहना
हीभलोहै ऐसाजानना॥गाथा॥दूरेकरनंदुरंपीएहणं॥ तहप्रभावण
दूरेजिणधम्मसद्दहाणं॥तिसकंदुरकाइनिहवइ॥१३५॥अर्थ॥जिनध
र्मकिश्रद्धाकरणाही।तिस्तुदुषनिकानाशकरेहै॥का आचरणकरणासाध
नकरणाप्रभावनाकरणाएतोदुरहीरहे॥ जिनधर्मकिश्रद्धाकरणाहीतीव्र
दुषनिकानासकरेहै॥भावार्थ॥व्रतादिककाअनुष्ठानादिकतौदूरहीरहो॥अ
एसम्यक्तहोतेहिनरकादिदुषनिकाअभावहोयहै॥तातेजिनधर्मसस

धर्मि नाही॥ मिथ्यात्वादिककरी नरकादिकके पात्र होयहै॥१२४॥ अर्थ॥ मा
माजंपहवहु अंजेवद्दा चिक्कलेहिकम्मेहिं॥ सद्धे सिते सिज्जयइ॥ हिउवयसो
माहादोसा॥१२५॥ अर्थ॥ तूमबहुत मलकहै मतकहै जे चिकने कर्मनिक
रिबंधे है॥ तिनकौ सब निके लोकनि विषैं हितोपदेसहै॥ सो महादोषरूपहै॥
॥भावार्थ॥ जिन जीवनिकै निष्ट मिथ्यात्वका उदय है॥ तिनकौ वारंवार उपदेस
करिकौछु साध्य नाही तैतौ उलटे विपरीत परणमै है॥ असा वस्तुका स्वरू
प जांनि मध्यस्थ ही रहणा योग्य है॥ गाथा॥ हिअयम्मि जे कुसुद्धा॥ ते किंबु
इयंति धम्मवयणेहिं॥ ताताणकएगुणीणो॥ निरत्थयं तमहिअप्पाणं
॥१२६॥ अर्थ॥ जे जीव हृदयमै असुद्ध है॥ मिथ्याभावकरी मलिनै है॥ ते कहा

जिनेहे वल्लभ कहीए उत्कृष्ट जिनकी॥ असे गणधर हे ते अघार प्रयसनां ही॥ तो भी
ज्ञानि नके हृदय में रमै है॥ अंगे कोउ कहै॥ जो हमतो कुगुरुनकौ ही सुगुरु मान
कपूजेंगे॥ गुणनी की परिक्षाकरि हमारे कहा करणा है॥ ताका निषेद करे है॥ गाथ
॥ अइया अइयाविहा सुद्धगुरू जिणवरिंद तुल्लं ति॥ जो इह एवे मणइ सो॥
विमुहो सुद्धधम्मस्स॥१३०॥ अर्थ॥ आचार भी अतिपापी है॥ परिग्रहादिक
के धारि कुगुरु है ते भी सुद्ध गुरु॥ अर जिनराजके समान है॥ या प्रकार जो इस
लोकमै मानै है॥ सो सुद्ध धर्मते विमुष है॥ भावार्थ॥ जाकै सुगुरु कुगुरु मे विशे
ष नाही॥ सो मिथ्यादृष्टी है॥ गाथा॥ जं तं वंदंसि पुज्जसि॥ वयणं हिलेसि तस
राएणं॥ ता कहु बुद सि पुज्जासि॥ जिणवायदियपिणो मुणसि॥१३१॥ अर्थ॥

है ।। आगे जिनेनेधर्मकी प्राप्ती होय असे श्रीगुरुनिके संगमकि प्रभावना भावे
है ।। गाथा ।। कइया होइदी वसो ।। जइया सुगुरुण पायमूलम्मि ।। उस्सुत्तलेशवि
शलवरहीओ ।। उणिसुणो सुजिणधम्म ।। २१८ ।। अ ।। वह दिवस कब होयगा जब
मे सुगुरुनके निकट मे जिनधर्मको सुनेगा ।। कैसा नया शंता सुणेगा ।। उत्सू
त्रकालेसकरहीए अज्ञानसो इनया वीयका कारण ताकरिनया संता सुनेगा ।।
।। गाथा ।। दिट्ठा वि केवी गुरुणो हिएण रमंति मुणियतत्ता ।। केवि पुण अदिट्ठा ।
चिय रमंति जिनवल्लहो जेम ।। २१९ ।। अर्थ ।। केइ गुरुदेषते संते भी तत्वज्ञानीन
कहृदय मे नरमहे ।। भावार्थ ।। जे लोक मे गुरु अदृष्ट है ।। देषने मे न आवे है ।। तो
भी तत्वज्ञानिनके हृदय मे रमे है ।। ज्ञानितीनका परोक्षण स्मरण करे है ।। जैसे

या ।। २२० ।। अर्थ ।। जो राजधनादिकके कारणभूत व्यापार है ।। ते निश्चय करि अ
त्यंत पापरूप है ।। ताते जे संसार ते भयभीत भये संते तिन व्यापारनिको त्यागे ते
धन्य है ।। भावार्थ ।। जिनमत मे कोउ धनादिक अधिकराषि आपको बडा मानेसो
नाही ।। इहां ते धनादीकके त्यागकी महिमा है ।। असा जानना ।। गाथा ।। विया दि
सन रहिया ।। घणसयणदाहिमो हिया लुद्धा ।। सेवे नियय कम्मं ।। वा वोरउयर
भरणट्ठा ।। २२० ।। अर्थ ।। जे जीव विर्यादि सत्वरहित है ।। अर धन अर पुत्रादि स्व
जननकरी मोहीत लोभी है ।। ते उदरभरणके अर्थ व्यापारादि विषे पापकर्म
सेवे है ।। जे जीव शक्तिहीन है ते मोहीहे ।। ते उदरभरणको पापरूप व्यापार मे रा
चे है ।। और जे शक्तीवान है ते नराचे है ।। आगे उदरभरणके अर्थ पापरूप आ ४१

आज्ञानि जिव धर्मके स्वरूप परमार्थ गुणरूप हितकों वा अहितकों नाही जानें है। तिनके उपर ज्ञान्यां है धर्मका स्वरूप जिननें। असे ज्ञानि जिवनिकै रोस कैसे होय। ज्ञानी जानें है जो ए मिथ्यादृष्टी धर्मका स्वरूप जानें नांही। तापरि काहे कारो स असे समस्थ रहे है।। गाथा।। आथावी जाण वपरीते। सिंकह होय परिजिए कुरूणा। घोरा णवंदियाएं। य दिठने णयमुणेय पचं ॥१९॥ अर्थ॥ जीन जिवनीकै आपका आत्मा ही वैरी है। मिथ्यात्व कषाय निकरि आपका घात आप ही करें है। तिनकै परजीव निकी दया कैसे होय। जैसे घोर वंदिषाना मे पडे जीव है। ते औरनकों कैसे सुषी करें कैसे छुडावे।। गाथा।। जेरज्ञा धणाइणं कारण। मूया हवंती वाचारा ते। बहु अइपाव जुया। धणा छंडि तिभवमी

ताजइमं वपवयणं। वारंवार सुणं तु समयाम्मि। दोसेण अवगणिताई। स्सुतुपयायसेंवती।।१२३।। नाणकहं जिण धर्म्मं। कहणं कहपहा णवेरगं। कूडाभिमाण पंडियणडि। आबुडंति णरयाम्मि ॥१२४॥ अर्थ। जो महावीर स्वामी का जीव मारीच जैनसूत्रके उलंघि करि उपदेस करया ताकरि अति भयानक भव वनविषै कोडाकोडि सागर भ्रम्य ॥१२२॥ ताते ऐसा वचन भी शास्त्रमे वारंवार सुनिकै दोसनिकौ नाही गिने। ताकरि मिथ्या सूत्रनके वचननकों सेवें है तिनकै जैन धर्म कैसे होय। अर सम्यकज्ञान कैसे होय। अर उत्तम वैराग्य कैसे होय। ते ज्युं टे अभिमान करि आपकौ पंडित मानते संते नरक विषै डुबे है।।
भावार्थ ।। जे जीन ज्ञान गर्व करें है अपनि पंडिताइ करी अन्यथा कहे है ते जिन ४२

रंभ करे है॥ ते तो अधम दो ही॥ परंतू उतिम ते भी अयंत उत्सुत्र बोलने वाले तिन
३ को नींदा करे है॥ गाथा॥ छंयाहमाण अहमा॥ कारणरहिया अणाणगव्वेण
जे जंपिती उस्सुत्तं॥ ते सिं धिद्धित्थु पंडित्ते॥ २२१॥ अर्थ॥ जे जीव कारण रहित अ
ज्ञानके गर्व करी सूत्रकों उलंघी करे बोले है॥ पापी तें ते भी असंत पापी है॥ तो उन
के पंडितपने मे धिक्कार होउ॥ भावार्थ॥ लोकीक प्रयोजन के अर्थ पाप करे है ते
तो पापी ही है॥ परंतू जे विना प्रयोजन पंडितपने के गर्व अन्यथा उपदेश करे है॥ ते
महापापी है॥ ताते कषायके वसते अेक अक्षर भी जिन वानी का अन्यथा
कहे ते अनंतसंसारी होय अेसा कह्या है॥ गाथा॥ जं वीर जिणस्स जिउ मर
इ उस्सुत्तलिसदेसणउ॥ सायर कोडाकोडि॥ हिंडि उ अइ भीम भवरणे॥ २२२॥

रूप थोडे है॥ जे वैराग्य मे तत्पर भय सते जिन वचन विषे रमे है॥ बहुरि तिस जिन
वचनके ज्ञान ते॥ संसार ते भय भीत भए संते सम्यक्त को ग्रहण करि पाले है॥
अनेक षोटे कारण मिले तो भी सम्यक्त विचाररूप शक्ति को प्रगट करि श्रद्धान ते
न चीगे है॥ अैसे जिव होना दुर्लभ है॥ गाथा॥ सव्वंगंपि हु सगडं जह ण चलइ इ
क वड हिला रहियं॥ तह कम्म फडाडो वं॥ ण फलइ सम्मत्त परिहीणं॥ अर्थ॥ जैसे
प्रगटपने सर्व अंग सहीत गाडा भी एक धुर रहीत चाले नांही॥ तैसे धर्म का ब
डा अडंबर भी सम्यक्त रहीत चलेनहो॥ ताते सम्यक्त रहीत व्रतादि धर्म धारणा
योग्य है॥ अेह तात्पर्य है॥ गाथा॥ ण मुणंति धम्मतत्तं॥ सत्थं परमत्थ गुण हि
यं॥ अहियं बालाणं ताणुउवरी॥ कह होसो मुणिय धम्माणं॥ २२७॥ अर्थ॥ जे ४०

पिसुद्धधम्मं॥काहिंति धणाणजणउ आणंदं॥मिच्छत्तमोहियाणं॥होयरइ
मिच्छधम्मेसु॥१२३॥अर्थ॥कह्या भया जो शुद्ध जिनधर्मका स्वरूप सो केइ ज्ञा
गपवांनजीवनिकें आनंद उपजावे है॥अर जे मिथ्यात्व करि मोहीत जिव है॥ति
नकी प्रतीती मिथ्याधर्मविषे होय है॥गाथा॥एयं पि महादुक्खं॥जिणवयण
विऊण सुद्धहीययाण॥जं मुढा पावाइं॥धम्मं भणिऊण सेवंति॥१२४॥अर्थ॥
शुद्ध है चित्त जीनके ऐसे जिनवचनके ज्ञाता तिनके एक ही महादुख है॥जो मुढ
जीव धर्मका नाम लेय हिंस्यादि पाप करे है॥तिनकी मुर्षता देषी ज्ञानीनके क
रूणा उपजे है॥गाथा॥थोहा माहा एए भावा॥जे जिणवयणे रमंति सेवी गा
ते ते भवभयभीया॥सम्मं सनीइ पालंति॥१२५॥अर्थ॥ऐसे महानुभाव पु

य व्यतित होय गइ सो फेर आवती नाही ऐसा वस्तस्वरूप है॥तातें सो कुकर
नां है वर्तमानमे दुषस्वरूप है॥अर आगामि नरकादि दुषका कारण है॥किछू
सो वमे सार नाही॥आगे सो कादि जिनके ने होय है॥ऐसे ज्ञानि जिव आचार दु
र्लभ है ऐसा कहे है॥गाथा॥सपइ दुस्समकाले॥धम्मत्थी सुगुरुसावया दुल
हा णामगुरु णामसढा॥सरागदोसा बहु अत्थी॥१२६॥अर्थ॥अबार दु
षमा कालविषे धर्मार्थि गुरु अर श्रावक दुर्लभ है॥राग द्वेष सहीत नाममात्र
गुरु॥अर नाममात्र श्रावक बहुत है॥भावार्थ॥इस निकृष्ट कालविषे परमा
र्थ धर्मसेवना दुर्लभ है॥लोकीक प्रयोजनके अर्थ धर्म सेवे है॥धर्मसेवनका गु
ण जो वितराग भावना ताकौ न पावे है॥सो ऐसे जिव घने हि है॥गाथा॥कहियं

॥भावार्थ॥ संसार मे पर्याय द्रीष्टि करीकै उभी पदार्थ थीर नाहि॥ तातै सरीसादि
कके अर्थ तथा पाप सेवना॥ अर आत्मा का कल्यान करणा यह मुर्षता है॥गाथा॥
सो एण कं दिउणं॥ कदे उणं सिरं चं उरउरं॥ अप्पं रिव वंति णरयं तं पिहु धिद्धि
कु णेहतं॥११०॥अर्थ॥ जे जिव गये पदार्थ का सोक करी सब्द सहीत रूदन
करीकै॥ अर मस्तक छाति कूटी करीकै आपकौ नर्क विषै पटकै है॥ तिस षोटे
स्नेहकौं भी धीक्कार होउ॥ गाथा॥ एगं पिण मरण दुहं॥ अणं अप्प विरिवप्प
एण रएणं च मालपडनं॥ अणं लउडेन सिर घाउ॥१११॥अर्थ॥ ऐक तो मर
णका दुष अरदुजा आत्मा नरक विषै पटकी ऐसो यह केसा कार्य है॥ जैसें
एक तौ उपरिसे पटकना अरदुजा लारीसे सीर कूटे तैसो है॥भावार्थ॥ जो पर्या

में कह्या है॥गाथा॥ जवेण विसु गुरु जिणवल्लहे हरसके सिंण उल्लसइ स्स
मं॥ अहे कह दिणमणी ते अं अ जुआ णं हरंउ अंधंत॥१०९॥गाथा॥अर्थ॥
जिनराज है इष्ट जिनके ऐसे निर्ग्रंथ गुरु का उपदेस होते संते भी केइ जिवनिके
सम्यक्त हुलसाय मान न होय है अथवा सुर्य को तेज घुघुकू अंधपना कैसे हरे
नाही हरे॥भावार्थ॥ जाका भला होणहार नाही ताको सम्यक्त उपदेश न रुचे
ताकौ तो विपर्यय दीसे आगे मिथ्या द्रष्टी जिवनिकी मुर्षता दिषावे है॥गाथा॥ ति
हुंवण जण मरंत दिठण णि अंति जिणे अप्पाण विरमणी न पावा उद्धिद्धि
धिरुतणं ताणं॥१०९॥अर्थ॥ तिन लोक के जिव मरते दिषिकै जे आत्मा को ना
ही अनुभवे है॥ अर पापते उदासन ही होय है तिनके धिठपनेकौं धिक्कार होउ ३८

तौ साधर्मि विसेषज्ञानिनकी संगति करो॥ संगति सै ही गुण दोषनकी प्राप्ति देषिहे॥ गाथा॥ अज्जिवी गुरुणो गुरुणो णो॥ सुद्धा दी संतिन उघडा केवि॥ पुनु जिण वल्लह्ह झारिझो॥ पुणो जीण वल्लहो चेव॥ १०७॥ अर्थ॥ अवार भी केइ गुणवान निर्दोष गुरु केइ दिसै है॥ कैसे है ते जिनराज समान है॥ नग्नमुद्राके धारी है॥ बहुरि केवल बाह्य लिंग ही नाही तौ कैसे है॥ जिनराज ही है इ ह जिनके असे है॥ भावार्थ॥ जिन भाषित धर्मके धारि है॥ केवल नग्न परंहंसादि कते नाही॥ इहां काउ कैहे ना अबार क्षेत्र मे मुनि तो दिसते नहि इहां कैसे कहै॥ ताका उत्तर॥ जो तुम्हारी ही अपेक्षा तौ वचन नाही॥ वचन तौ सब नकि अपेक्षा है॥ सौ कोइके प्रत्यक्ष होहीगं॥ जातें दक्षिण दिसा मै अबार ही मुनिका सद्भाव सुना स्म

नै होय है॥ जिन वचन रुप रत्ननिके आभुषण करि मंडित है॥ ते सर्व हि सुगुरु है॥ भावार्थ॥ इस कलिकाल मे कोइ जिव असे माने है॥ जो अमुकी गच्छ के वा अमुकी संप्रदायके ते हमारे गुरु है॥ वा कि औरनके गुरु है॥ हमारे नाही सो असा एकांत जिनमत मे नाही॥ जिनमत मै जे यथार्थ आचरणके धारि है॥ ते सर्व हि गुरु है॥ गाथा॥ चलिकि ज्ञामो सजं ण॥ जणस्स सुविसुद्ध पुण्णजुत्तस्स॥ जस्स लहुं सगमे ण॥ विसुद्धिमम बुद्धि समुल्लस्सइ॥ १०८॥ अर्थ॥ निर्मल पुण्य करि युक्त जो सज्जन पुरुषज्ञा किमेव लीजा ठहुं॥ प्रसंसा करहुं॥ ज्याके संगम करि रिघ्रही नीर्मल बुधि हुलसायमान होय है॥ भावार्थ॥ मिथ्यात्व रहित सम्यक्त्वादि धर्मकी इच्छा है॥ 37

यागुरुणोधम्मं थंसेसेवोसरिमो॥१०४॥अर्थ॥हमारैरागद्वेषकोइके उपरनाहीहै॥एकगुरुनविषैरागद्वेषहै॥सौरागद्वेषकहा॥जो जिनाज्ञा मेंनसरैहै॥तेतौहमारैधर्मअर्थकेगुरुहै॥उनसीवायकुगुरुनीकोमेंत्या ह्युं॥भावार्थ॥कोइकहैजोतुमारैरागद्वेषहै॥तातैऐसाउपदेसकरौहो॥ता कौकह्याहै॥जोहमारैलौकिकप्रयोजनकेअर्थउपदेसनाही॥केवलधर्म केअर्थसुगुरुनिकाग्रहणकरावनेकाप्रयोजनहै॥जातैसुगुरुकुगुरुहि सम्यक्त्वमिथ्यात्वकेमूलकारणहै॥गाथा॥णोअप्पणापरायागुरुणो कइआविदुतिसगाणं॥जिणवयणरयणमंडण॥मंडियसव्वेवितेसु गुरु॥१०५॥अर्थ॥श्रद्धावानजीवनिकैअपणेवापरायेगुरुकदांचितभी

॥गाथा॥करियाइफूडाडोव॥अहिअंसाहंतिआगमविदुणं मुद्धाणरंजण थंसुद्धाणंहीलणस्याए॥१००॥अर्थ॥जेजिवनपक्ष्वराणादिक्रियाकाआ डंबरआगमरहितअधिकसाधेहै॥सोमुर्षजिवनिकेरंजायमानिकरिनेके अर्थहै अर ग्यानिनकेनिंदाकेअर्थहै॥भावार्थ॥केइमिथ्यादृष्टीजिनाज्ञा विनाअनेक॥आडंबरधारैहै॥सौमुर्षनकोउत्कृष्टभासैहै॥ज्ञानिकोनभा सैहै॥ज्ञानिजानैहैयहुसमस्तक्रियाजिनाज्ञारहीनकार्यकारीनांही॥गा था॥जोदेइसुद्धधम्मंसो॥परमप्पाजयम्मिणहुअको॥किंकप्पद्दुमसरि सोइ॥यरतरुहोइकरउयाहि॥१०१॥अ०॥जोसुद्धजिनधर्मकाउपदेसदेय है॥सोहिलोकमेंप्रगटपणेपरमात्माहै॥औरधनधान्यादिपदार्थनिका

भावार्थ॥

गाथा॥मुलं जिणंददेवो॥तव्वयणं गुरुजणं महाशयणं॥सेसं पावट्ठाणं॥परं मध्याणं च वज्जेमि॥१०३॥अर्थ धर्म कि उत्पत्ति के मुल ऐसे जो जिनेंद्र देव॥ अर तिनके वचन अर महासज्जन स्वात्मावीक निर्ग्रंथ गुरु ए पदार्थ धर्म की उत्पत्ति के मुल कारण है॥ बहुरि इन सीवाय अन्य कुदेवादिक पाप का स्थान है॥भावार्थ देवगुरु धर्म का श्रद्धान सम्यक्त का मुल कारण है॥ सो आपके वा परके दृढ करणे के अर्थ यह उपदेस मेरचा है॥ यह हु आसय है॥गाथा॥अम्हाण रागरोसं॥कस्सु।व रिणथि अथि॥गुरु विज्ञाये जीण आण

है॥ ते जिनाज्ञा ने माने ने ही ते प्रवर्ते है॥ ताते धर्मार्थिन को कषाय के वसते जिनाज्ञा भंग करणा नाहि॥ अर जिन को आपना माना दिपावने होय तिन की कथा नाही॥गाथा॥जगगुरु जिणस्स वयणं॥सयलाण जियाण होइ हियकरणं॥ता तस्स विराहणया कह॥धम्मो कह णु जीवदया॥१०२॥अर्थ॥जगतगुरु जो जिनराज ताका वचन सकल जिव निका हीतकारी है॥ ताते जिनवचन कि विराधना करी कहा धर्म के से होय॥ अर जिवदया के से होय॥भावार्थ॥के उ दुटिया आदि है ते जिनज्ञा प्रमाण पूजादि कार्य ने मे हिंसादिक होने ते भगवान उपदेसादिक का है को देते ताते ते रिसमझ ही मे दोष है॥ जिनवचन है सो सर्व हितकार ही है॥ अर ज्याके जिनाज्ञा प्रमाण नाही ताके धर्म ही न दया है॥

यते है तिन कौ न गीने है ॥ केसे है ते अयंत मान मोह रूप राजा करि ठगे है ॥ भा॰
जे यथार्थ अचरण तौ करि सकै ते नाही ॥ अर आपकौ महंतमना ये चाहै है मो
ही है ॥ तिनकूं यहु यथार्थ उपदेस रुचे नाही ॥ गाथा ॥ उयराण चक्कुराण वि आण
भंगे घि होय मरणादुहं ॥ कि पुण तिल्लोय पहुणो ॥ जिणंद देवा हि देवस्स ॥ ९८ ॥
चक्रवर्तिनका और राजानका भी आज्ञा भंग होते सते मरणका दुष होये है ॥
तौ कहा फेर तिन त्रलोकका प्रभु जो जिनेंद्र देवाधिदेव ताकी आज्ञा भंग तै दु॰
ष नही होय होय ही होय ॥ भावार्थ ॥ केवल अज्ञानते पदार्थको अयथार्थ॰
भी कहै है ॥ तौ भी आज्ञा भंग न कहिय ॥ बहुरि कषायके योगते अंस मात्र भी
अन्यथा करे वा कहे है ॥ सौ अनंत संसारि होय ॥ जाते समस्त मिथ्यामत प्रवर्ते ३८

देनेवाला परमात्मा नाही ॥ सो कहा कल्पवृक्ष समान और रत्नादिक दाचीत भी
होय है ॥ अपितु नाही होय है ॥ भावार्थ ॥ सर्व जीवनिका हित सुष है ॥ बहुरि सो
सुष धर्मते होय है ॥ जो धर्मका स्वरूप दस देय है ॥ सो हि परम हितकारी है ॥ बहु
रि अन्य अस्त्री पुत्रादिक है ॥ ते हितकारी नाही ॥ जाते मोहादिकका कारण
है ॥ गाथा ॥ जे अमुणीय गुण दोसा ॥ ज वक हवि बुहाण हं ति मज्झत्था ॥ अह
ने बहु मच्छिथा ॥ ता विस अमियाण तुल्लं तं ॥ १०२ ॥ अर्थ ॥ जे नाही जाने है गु॰
ण दोष जिनने असे मूर्ष जीव है ते पिंडतनके उपर मध्यस्थ केसे होय क्रोध॰
वि केसे न करै करै ही करै ॥ जाते उनकौ पंडितनके गुणनिकी परिष नाही ॥ अ
थवा ते मूरष भी मध्यस्थ होय तौ विष अमृतका समान पना ठहरै सौ है नाही

गाथा॥ सिरिधम्मदासगणिणा रइयं॥ उपएसमालसिद्धंतं॥ सव्वे वि समणसड्ढा॥ मणंति पढंति पाढंति ५६॥ अर्थ॥ श्री धर्म्मदास आचार्य करि उपदेस निर्वाहे मालाजा विषै ये सां सिद्धांत यह हुरच्यो है ता हो सर्व ही मुनि श्रावक मानै है॥ पढै है पढावै है॥ भावार्थ॥ यह उपदेस आगै धर्मदास आचार्य नैं रच्या है॥ सो हि मैं नेक हाक छु कपोल कल्पीत नाही या ही तै प्रमाण भुत है॥ अर सम्यक्ता दिक के पूछ करनै तैं सब हि का कल्यान कारी है॥ गाथा॥ तं चेव केइ अहिमा छा॥ लिया अइमाण मोहनूपेण॥ किरियाय हीलंता॥ हाहा दुरकाइ ण गणंति ५७॥ अर्थ॥ बहुरि ता हि सास्त्र कौ केउ अधर्मि मी थ्या द्रष्टी है ते आचरण विषै निंदा करै है॥ हाय हाय निंदा करणे तैं नरका दिक का दुष है

भी फेर परम तत्वज्ञो सुद्ध आत्मा का ध्यान करै है॥ तातै आत्मा का परम हीत रूप मोक्ष पावै है॥ भावार्थ॥ जो संसार मे सुष होता तो तिर्थकरा दिक बडे पुरुष का हे कौ त्यागते॥ तातै जांनिए है संसार मैं महा दुष है॥ गाथा॥ वणीमिणारयाउं विजे सिं दुरकाइ संभरंताणं॥ भव्वाण जणइ हरिहर॥ रिद्धि समद्धि विउव्वासं॥ ५८॥ अर्थ॥ तिन भव्यजीवनि कौं मे वर्णु हुं धन्य मानूं हुं॥ जिन के नरक के दुष स्मरण करतें जके हरिहरादिक की रिद्धि हुं भी उदास भाव उपजावे है॥ भावार्थ॥ ॥ग्यानि जिव है ते हरिहरा दिक की विभुति मैं न राचै है॥ तो अर विभुति मैं कैसे राचै॥ तातै ग्यानि जीव बहु आरंभ परिग्रह नैं नरका दि दुषनि की प्राप्ति जानै है॥ केवल सम्यग्दर्शना दिक ही कौं आत्मा के हीत मानै है॥३॥

भयकरि रहित सुभटहै ।। भावा ।। धर्मात्मा पुरुषनौं वक्ताका निमीत नै होय तो भी ताका निमीत कष्ट सें भी मीलाय करि धर्मश्रवण करै है ।। अर जिनकै स्वमेव वक्ताका निमित मील्या ।। अर तो भी धर्मश्रवण नै करै है । ते आपका अकल्याण करने ते दुष्ट है ।। अर कहै है कि लज्या नाही तो ते धीट है ।। अर संसारका भय होता तो धर्मश्रवण करता ।। तातै जानियेहै । संसारके भयरहीत सुभट है । यते तर्कानिंदा है ।। गाथा ।। सुद्धकूलधम्मजाय वि गुणीणो णरमंति लिंगि जिणं दिरकं ।। तत्तो वि परमतत्तं ।। तउ वि उवयार उ मुरकं ।। ८४ ।। अर्थ ।। सुद्धकूलधर्म विषे उपजे जो गुणवान पुरुष है ते भी निश्चय करि संसारमै नाही रमै है । जिनराजकी दिक्षा ग्रहण करै है । तातै भी फेर परमतत्व जो सुद्ध आत्माका ध्यान करै है । तातै

गुणकी प्राप्ति होय ऐसा न्याय है ।। तातै अर्हंतका स्वरुप ज्ञान वैराग्यमय है ।। ताकि पूजा वंदना सरण कियेता हि गुणकि प्राप्ति होय ।। अर हरिहरादिक देवनि स्वरुप काम क्रोधादिक वीकारमय है ।। तिनकी पूजादिक कीये मिथ्यात्वादिक पुष्ट होय ही होय ।। ऐसा ज्ञान नां ।। गाथा ।। जं जिण आणायतं । चिणमणई णमणण सेसं ।। जाणइ लोय पवाहे ।। णाहु तंमं सोयनत्त दिट्ठि ।। ८५ ।। अर्थ ।। जो जिनराजकि आज्ञा विषे कह्या तिस तिसकौ तो मानै है ।। अर जिन आज्ञा सिवाय और कौन मानै है । अर लोकरित विषे परमार्थ न जानै ।। सो पुरुष तत्वज्ञानि है ।। भावार्थ ।। सम्यगदृष्टि तै जिनभाषीत धर्मकौ तौ सत्यार्थ जानै है । अन्य मिथ्यादृष्टी लौकनकि सब रिती मिथ्या जानै है ।। गाथा ।। जिण आणाए ध

छोडिये॥ सारभूत जिनराजकी पूजाकूं करैहै॥ भावार्थ॥ सम्यग्दृष्टीके अवस्य
ज्ञानवैराग्यहोयहै॥ तोतै वितरागकि पूजा विषैपरमरुचीवधैहै धर्मकार्यमे
नलगैहै॥ यहु हि शम्यग्दृष्टीनका चिन्हहै॥ बहुरि जाकै धर्मकार्यतौ रुचैनाहि
अरजैसैतैसै ताकौ पुराकीयाचाहै॥ अरव्यापारादिककार्य रुचिसौ करै॥ यहू
ही मिथ्यादृष्टिनका चिन्हहै ऐसाजाननां॥ गाथा॥ तित्थयराण पूजा॥ सम
त्तगुणाण कारणं भणीया॥ सावियमित्थानपरि जिणसमयेदेसिये अपुयं
॥८०॥ अर्थ॥ तिर्थंकरदेवनिकी पुजांतौ सम्यक्तकेगुणनिका कारणहै॥ बहु
रि सोइ हरि सोइ हरिहरादिक अपूज्यनकी पूज्या मिथ्यात्वकि करणेवाली।
जिनमत विषैकहींहै॥ भावार्थ॥ जाकौ जो गुण होयताकी सेवा कियेताही

कौ उपकैहै जो दिगांबरशास्त्रनैमे भी अन्यअन्य कथनहोय ताकौ कहाकरे॥ ताका
उत्तर जो सर्वशास्त्रनैमे एकसा एककथनहोय तौं सोप्रमाणहै॥ अरकहीं विवि
क्षाकेवसतै अन्यकथन होयतौ कि विधिमीलायदलेय॥ और अपकैज्ञानमे
विधीनामिलैतो आयकि भुलीमानै॥ बडेज्ञानिनसौ निर्णयकरीलेय विशेष॥
शास्त्रदेषनेकाउद्यमिरहै॥ तो भुलिमीटजाय श्रद्धानिर्मलहोय॥ विशेषशास्त्र
नका अभ्यास सम्यक्तका मुलकारणहै॥ गाथा॥ साहीणेगुरुजोगे॥ जेणहु णि
सुणंति धम्मसत्थं॥ ते धिठदुठचित्ता अह सुहडा भवभयविहुणा॥८३॥ अर्थ
गुरुजो धर्मका स्वरुपकावक्ता ताका संयोगस्वाधिन होतेसतैभी जो निर्मल
धर्मका स्वरुपनै सुनैंहै तेपुरुषदुष्टहै॥ और धिटचित्तहै॥ अथवा संसार के

म्मो-आण रहियाण फुडा मुनिइ यमुणि ॥ ३ णयनतं जिण आणा एकुणहं ध
म्मं ॥ ८२ ॥ अर्थ ॥ जिन आज्ञा करि तो धर्म है ॥ अर आज्ञा रहित जिव निके प्रगट
अधर्म है । सो असा वस्तु स्वरूप जानि करि जिनाज्ञा करि धर्म करो हु ॥ भावा ॥ जो जो
धर्म कार्य करे सो सो जिना आज्ञा प्रमाण करणा अपनी युगति करी मानादी पोष
ने के अर्थ आज्ञा सीवाय प्रवर्तना युक्त नाही ॥ जो ते छदमस्थ अवस्य भूले है ॥
इहां कोउ कहे जो जिना आज्ञा तो स्वेतांबरादिक कहे है । हम कौन कौ प्रमाण क
रै ॥ ताका उत्तर ॥ जो युक्त शास्त्र अविरोधि कुंदकुंदादि महंत आचार्य ननें ॥
अथार्थ आचरण कया है ॥ ताको अंगीकार करणा ॥ स्वेतांबरादिकने अपना
सिथलाचार कह्या सो युक्त सास्त्र से परिक्षा करे प्रगट भासे सो सागना ॥ फेर

कोउ कर्म के उदय तै उपसर्ग भि आवै ॥ परंतू निश्चल श्रद्धान रहि ते तै पापक
र्म कि निर्जरा होय ॥ पुन्य के अनुभाग बढे तब आगामि महा सुष होय ॥ बहु
रि मिथ्यात्व सहीत जिव के कोउ पूण्य के उदय तै वर्तमान मैं सुष सा दिसै ॥
परंतू मिथ्यात्वादिक पाप बंध होने ते आगामी नरकादीक का महा दुष उप
जे ॥ ताते सम्यक्त सहित दुष हि भला ॥ अर मिथ्यात्व सहित सुष भी भला ना
ही ऐसा जानना ॥ गाथा ॥ उवो चिनाणपण मउ ॥ होलंतो णि अपुरी हि विथा
रं ॥ मरणं ते विहु पत्त ॥ समत्ते जेण छंडंति ॥ ८६ ॥ टिका ॥ जे जिव मरण पर्यन्त दु
ख कौ भि प्रापती होते संते सम्यक्त नही छोडे है ॥ तिनकौ इंद्र भी अपणी रिद्धि
विस्तार कौ निंदता संता प्रणाम करै है ॥ भावार्थ ॥ इंद्र भिय हजानै है ॥ जिनके

धम्मा ण पवन्नंति ॥ ८४ ॥ अर्थ ॥ पापी जीव है ते मिथ्यात्व के सेवकन के शोकादो
विघ्न होय तौ भी कहै नाहीं ॥ बहुरि द्रढ सम्यक्तीनकै विघ्न का अंस भी पूर्व कर्म
के उदय तें होय ताको प्रगट करिये है ॥ भावार्थ ॥ कुदेवादिक के सेवन में सेकड़ो
विघ्न होय ॥ ताको तौ मुर्ष गिनै नाहीं ॥ अर धर्म सेवतें पूर्व कर्म के उदय तें कदा
चित किंचित विघ्न होय तौ कौ कहै धर्म तें विघ्न भया ॥ सो ऐसी विपरीत बुद्धि
होय है ॥ सो मिथ्यात्व कि महिमा है ॥ गाथा ॥ संमत्त संजुयाणं ॥ विग्घ पि हु होइ
उच्छुसे रिसं ॥ परम मुच्छवं पि मिच्छत्तसं ॥ जुअं अइ महाविग्घं ॥ ८५ ॥ अर्थ ॥
जे सम्यक्त सहित जीव है ॥ तिनके विषे विघ्न भी प्रगटपने उत्सव समान है ॥ ब
हुरि मिथ्यात्व सहित परम उत्सव भी महा विघ्न है ॥ भावा ॥ धर्मात्मा जीवन के

शमतरयण रायण ॥ समं तरं पण रहिआ ॥ संते विय ण दरिद्द ति ॥ ८६ ॥ अर्थ ॥
जो पुरुष सम्यक्त रूपी रत्न राजकरि सहित हैं ॥ ते पुरुष धन धान्यादि विभव करि ही
न है तौ भी विभव सहित है ॥ बहुरि जे पुरुष सम्यक्त रहित है ते धन होते संतै भी द
रिद्री है ॥ भावार्थ ॥ जाजिवकै आत्मज्ञान भयो है ॥ ताकै धन धनादिक परिग्रह के
होने न होने मे हर्ष विषाद नाहीं ॥ वितराग सुष का आस्वादि है ताते साचा धन
वान है ॥ बहुरि अज्ञानि है सो परद्रव्य कि हानी वृद्धि मे सदा आकूलीत है ॥ ताते
दरिद्री है ऐसा जाननां ॥ गाथा ॥ जिणपुण पछीवे ॥ जइ कुविसदाणं देइ धन
कोडि ॥ मुत्तणं तं असारं ॥ सारं विरियं ति जिनपुयं ॥ ८७ ॥ अ ॥ जो कोइ जिनरा
ज कि पूज के अवसर विषे श्रद्धानवान नंको कोटि धन देय तौ भी असार धनको

कीबडवारिहोय॥ ऐसे समस्त हि मिथ्यात्व आचरण करे है॥ तिनको सम्य॥
क्ज्ञानना हि ते मिथ्यादृष्टी है॥ गाथा॥ जह अइकल्लम्मि खुत्तं सगंडं कड्ढंति॥
के विधुरिधवल्ला॥ तह मिच्छाउ कुटंवं इह विरला के विकड्ढंति॥ ७९॥ अर्थ॥
जैसे असंत कीचमे फस्या जो गाडा ताहि केइ बडे बडे बलवान वृषभ है ते का
ढे है॥ तैसे इस लोकमे केइ उत्तम पुरुष मिथ्यात्वते कुटुंबको काढे है॥ भावा॰
जे जिव आपदृढश्रद्धानि है ते समस्त कुटुबको उपदेशादिकने मिथ्यात्व
रहित करे है ऐसे पुरुष ते थोडे है॥ गाथा॥ जह वद्दलेण सुरं महिअलपय
डं पिणेअ पिछंति॥ मिछत्तस्सय उदुराणा॥ न हु वणणि अंति जिनदेव॥ ८०॥
॥ अर्थ॥ जैसे प्रथ्वीतलमे प्रगटदेदिपमान जो सूर्य सो भी मेघकरि आछा २७

दित सम्यग्दर्शन है ते हि जीव सास्वता सुष पावे है॥ अर सम्यक्त ही अचिन्त्या
सी रिद्धि है॥ जाते सम्यक्त आत्माका स्वरूप है अर यहु इंद्रीभुगीतो बीनासी॥
क है॥ दुषकाकारण है ताते सम्यग्दृष्टिनकौ नमस्कार करे है॥ गाथा॥ छंडंति ए
अजिवंति एं॥ बमुखथिएणो न उणझम्मं॥ लम्भइ पुणोवि जीवं सम्मत्तं हारियं कु
तो॥ ८१॥ अर्थ॥ जो जिव मोक्षके अर्थ ने जीतव्य कुंतो त्रणवत की ज्यो सागदेय
है॥ परंतु सम्यक्त तो मिन साग है॥ जाते जीवन्य ते तो फेर भी पाउ या है॥ अर सम्यक्त
गया फेर भी पावना दुर्लभ है॥ भावार्थ॥ कर्मोदयके आधिन मरण जिवण ते
अनादि ते हो य है॥ परंतु जिनधर्म पावना महादुर्लभ है॥ जाते प्रणांत मे भी स
म्यक्त त्यागना योग्य नाहि॥ गाथा॥ गय विहवा विसविहवा॥ शहियाशहिया

अर्थ

॥भावा॥ जो घरके कुटुंबका स्वामि नयासता॥ मिथ्यात्व किरि चिसराहना करै
है॥ तो ताके कुटुंबके सबहि करै है॥ ताते सर्वहि रवंस संसार समुद्रमे डुबा
या॥ माउ कुलका मुखीया मिथ्यादेवन किरि चिसराहना करै॥ तो हमारे बडे
करते आए है॥ ताते समस्त हि मिथ्यात्व पुष्ट होनेते संसारमे भ्रमै॥ ताते जो
घरका स्वामि होय ताको मिथ्यात्व की प्रसंसादिक अंसमात्र भी करणा योग्य
ना हि॥ गाथा॥ कुडेच उथा णमी॥ बारस पिंडप्पदांन प्पमुहाउ॥ मिछत्तमावगा
या॥ कुणंति तो स्सिणा उ सम्मत्तं॥ ७८॥ कुडा च तुर्थिक हिए दंडा चौथ॥ और गो
गानवमि॥ अरव उ बारस अरवंत्या गते मे पिंडदांन॥ उनको आदि देयकरि
जे दसरा दिवालि होली गणगोर॥ और भी जिनमे मिथ्यात्व विषयकषाय

र करणां॥ अर जो ने यह कार्य न किया ताने नरभव पाया जीने पाया तुल्य है॥
गाथा॥ वेस्सा णवं दियाण य महा णा डुबा णा जर कसिरका णं॥ माता भरका
हा णं॥ विरया णं जंतिदुरेणा॥ ८२॥ सकेहमे गा जा या॥ सुहेण गच्छंति सुहम गं॥ मि
ज हि अमगो जाया॥ मंगा गच्छंत्वि तं वुज्जं॥ ८३॥ अर्थ॥ जे जिव शूद्ध मार्गमे उपजे है
अरते तो सुखसहित शूद्ध मार्गमे चले है॥ परंतू जे अन्य मारगमे उपजे है॥ अर
मार्गमे चले है सो आश्चर्य है॥ भा०॥ जाके जिन धर्म संतानमे चल्या आया है॥
ते जिन धर्ममे प्रवर्ते है सो तो ठिक है॥ परंतु जो अन्य कुलमे उपजे है॥ अर जिन
धर्ममे प्रवर्ते है सो यह आश्चर्य है॥ वे अधिक प्रसंसा योग्य है॥ गाथा॥ मिछ
त्त सेवगाणं विग्घ॥ समाउ पिवितिणो पावा॥ विग्धल वम्मि वि पिडिए॥ दिठ

दितलोकनेदेषेंहै॥ तेसहिमीथ्यात्वकेउदयकरि जिनदेवकेजीवनपोषेहै॥
भावार्थ॥ अर्हंतदेवकाजेसास्वरुपकह्या॥ तेसायुक्तशास्त्रतेअविरोधी॥
श्रीतिशयवाननकोप्रगटदिसेहै॥ परंतूजिनकेमिथ्यात्वकाउदयहै। तिनको
कछुभासतानाहि॥ गाथा॥ किंसोविजणिजाउज्जाउजणणी॥ किंगगउवु
द्धि॥ जयमिछरउजाउं॥ गुणेसुतह्मछरेवहइ॥ ७२॥ अर्थ॥ जोपुरुषमिथ्या
त्वमैंअशक्तहै॥ अरसम्यक्तादिगुणनिमैमछरताधोरेहै॥ तोवेहपुरुषमा
ताकेकहाउपज्या॥ अपितुनाहिउपज्या॥ अथवाउपज्यातोकाहेहीकोआसि
नया॥ अपितुनाहिनया॥ भावा॥ मनुषजन्मधारेकाफलतौयहुहै॥ जोजि
नवानिकाअभ्यासकरिमिथ्यात्वकोतौत्यागना॥ अरगुणनिकोअंगीका

रविसु॥ लंतिसारिसंघनडेहि॥ ७३॥ अर्थ॥ जेपुरुषजिनसूत्रकोउलंघिआच
रणकरतेसतेभीआपकोंभलेश्रावकपनमेंस्थापैहै॥ आपकोंश्रावकमान
है तेदलिद्रकरियसेभीआपकोंधनवाननकरिसमानतैलैहै॥ भावार्थ॥
केइजिवनिकेदेवगुरुधर्मकेश्रद्धानादिककातोकिछुठिकहीनाहि॥ अर
केइअनुक्रमभंगआकडिधारिआपकोंश्रावकमानैहै॥ तेश्रावकनाहिश्रा
वकतौयथायोग्यआचरणकरतातबहोयगा॥ गाथा॥ किविकुलकम्मि
म्मिरत्ता॥ किविरत्तासुद्धजिणवरमयम्मि॥ इयअंतरम्मिपिछह॥ मूढाणा
यंणयाणंती॥ ७४॥ टीका॥ केइजीवतोकुलक्रममेंआशक्तहै॥ जोबडेकर
तेंआएतेसेकरैहै॥ कछुनिर्णयकरतेनाहिं॥ बहुरिकेइजीवसुद्धजिनराज

केमतमें अज्ञानहै॥ जिनवाणीके अनुसार निर्णय करि जिनधर्मको धारे है॥ सो
इनका अंतर देषंहु बडा अंतर है॥ बाह्य तो एकसें दीषे है॥ परंतू परिणांम मनमें ब
डा अंतर है॥ परंतू मुढजिव है सो न्याय को न हि जाने है॥ सबको एक समने है॥ भा
वा॰॥ निर्णय विना कुलके अनुसार धर्म धारेगा॥ सो जिय कुलके धर्म छोडदेगा तब
आप हि छोडदेयेगा॥ अर निर्णय करि धर्म धारेगा सो कदाचित् न छोडेगा॥ तातें
जिनवाणीनके अनुसार निर्णय करि धर्म धारणा सो ही भलो है॥ गाथा॰॥
संगा विज्जाणअ हितुते॥ सिंघम्माइजे पकुवंति॥ मोतूण चोरसंगा॥ करंति ते
चोरियं पावा॥ ७९॥ अर्थ॥ जिन मिथ्यादृष्टीनका संगभी अहित है॥ तिनके ध
र्मनकुं जे करे है ते जिव चोरके संगको छोडिके पापी आपही चोरि करे है॥ भावा॰

जातें जिस तिस उपाय करि जैनमतकी श्रद्धा दृढ करणी और लोक रितसें मोहित
न हि होना॥ जो ए सर्व लोक करे है सो कछु तो यामें सार है ऐसा जानना॥ भावा॰
जिणमइ अवहीलाए॥ जं दुक्खं पावणंति अणाणि॥ णाणि णं सम्मरिज्ज भाणा॥
ण हियं थरथरनु॥ ८०॥ अर्थ॥ केइ अज्ञानि जिनमतकी आवज्ञा करे है॥ ताक
रि नरकादिकके घोर दुष पावे है॥ जो दुषका समरण करि ज्ञानिका ह्रदय क
यकर थरथर कांमें है॥ गाथा॥ अणाणीणं मिच्छा॥ दिठीण णि असिकिंदो
से॥ अप्पा वि किंणयाण॥ सिणजइ काठणज्झमतं॥ ८१॥ अर्थ॥ अरे जिव अज्ञा
नि मिथ्यादृष्टिनके दोषनिका कहा निश्चय करे है॥ वो तो मिथ्यादृष्टि ही है॥
तू आपहीको क्यं ना हि जाने॥ जो तेरे निश्चल ज्ञानपक ना हि तो तू भी दोषवान

है॥ तातै जिनवाणी के अनुश्रद्धा दृढ करणा॥ यह तात्पर्य है॥ गाथा॥ मिछत
मायरंत विजे॥ इहत्वं छिनगृह जिणधम्मं॥ नेपत्था विजरे णथ॥ मुतंइ छंति खीरा
इ॥७१॥ अर्थ॥ जे जीव मिथ्यात्व आचरण करे ते भी निर्मल जिन धर्म कौ वांछे है
ते ज्वर करि ग्रहस्थ सो दुग्धादी वस्तु पान कोइ छाकरै है॥ भावार्थ॥ केइ जिव
कुदेवादिक का सेवना आदि मिथ्या आचरण कौ तो छोडे नाहि कहै है एतो अव
तार है श्रद्धा तो हमारे जिनमत की है तीनकों कह्या है जो जहा ताइ मिथ्यादे
वादिक कौ सेवा नेरै है तहा ताइ सम्यक्त्व का अंस भी नाही तातै मिथ्यादेवादि
कका प्रसंग दुरि ही तै त्यागना तब किछु सम्यक्त्व कौ वारता करणी यह अनुक्र
म है॥ गाथा०॥ जइ केइ सुकुलवहुणो सीलमइल्लं निल्लंति कुलणाम मिछत २९

थाहै॥ भावा॥ कोइ जितपश्चरणादिक तो करै है॥ अर जिनवचन की श्रद्धा नही
करै है॥ तो सम्यक्त्व आडंबर वृथा है॥ तातै सम्यक्त्व श्रद्धानपूर्वक क्रीया करणा योग्य
है॥ गाथा॥ जह जह जिनेद्ववयणं॥ सम्मं परिणमइ सुद्ध हियायाणं॥ तह तह लो
यपवाहे॥ धम्मं पडिहाइ णादुह्व रिणं॥८८॥ अर्थ॥ सुद्ध है चित्त जिनके ऐसे पु
रुषनिकै जैसा जैसा जिनराज का वचन सम्यक्त्व प्रकार प्रणमै है॥ तैसै तैसै लोक
रिती विषै धर्म प्रतिभासै है॥ अर पोटा आचरण न हि प्रतिभासे है॥ भावा॥ जे
सा जैसा जिनके निर्मल श्रद्धान होय है॥ तैसा तैसा लोकव्यवहार मैं भी धर्मरूप
प्रवर्ति होय है॥ लोकमुढतारूप पोटा आचरण छुटे है॥ गाथा॥ जा णि जिणींदो
णिवसइ॥ सम्म हीय यम्मि सुहगुणेणा॥ जाणांति णंव विरायइ॥ मिछाधम्मा

इमो सयलो॥६७॥अर्थ॥ जिनपुरुषनिके हृदयविषे निर्मलज्ञानसहित जि
नराजवसै है॥ तिनकों यह समस्त मिथ्यादृष्टिका धर्म अत्राण वत प्रतिभासै है॥ भा
जे जिव वितरागदेवके सेवक है॥ तिनकौं सरागीनका कह्या मिथ्याधर्म तुछ भा
सै है॥ पुनका अभ्युदय देषि मनमै आश्चर्य नहोय है॥ जानै है जो यह विषमि
श्रीतभोजन है॥ वर्तमानमै भला दिषै है॥ परिपाकमै षोटो है॥ गाथा॥ लोहअपवा
हगामी॥ रणं पुह उपयं पुलहरीय॥ दिढ सम्मत महाबल॥ रहिअ गुरुअविहलं
ति॥६८॥ अर्थ॥ लोकमुढता रूप उतकृष्ट पवनकी प्रचंड लहर करि जे दृढ सम्य
क्त रूप महाबलकरि रहित है॥ ते गुरुवे पदार्थ भी हलै है॥ गाथा॥ सबमुढता
नैमैलोकमुढता प्रबलै है॥ जाकरि बडे पुरुषनिका भी श्रद्धान सीतल होय जाय है

देयादिकका निर्णय करते नाही॥ सो यह तीव्र पापका उदय है॥ जो निमीत मीलै भी
यथार्थ जिनमतनै पाया॥ गाथा॥ इयराण वि उवहासं॥ न मजुत्तं नाय कूलपसुआ
ण॥ पुण कोवि अंगी॥ जहां सेसु ह धम्मम्मि॥६१॥ अर्थ॥ हे भाई जे बडे कुलमे
उपजे पुरुष है॥ तिनकों औरनिका भी उपहास करणा अयुक्त है॥ बहुरि यह कौ
न आज्ञानि है सो सुद्ध धर्म विषे हास्य करणा॥ भा॰ हास्य करणा तो सर्वही पाप
है॥ परंतु जे जिव धर्म विषे हास्य करै है तिनकौं महापाप होय है॥ गाथा॥ दोसा जि
णदेवयणे॥ संसो जो जाण मिछपावम्मि॥ नाणं पिसु हहियया॥ परम हिएं दा
उ मिछंति॥६२॥ अर्थ॥ जिनके जिनराजके वचनमैं तो द्वेष है॥ अर मिथ्यात्व पापवि
षै हर्ष है॥ तिनकौं जो निर्मल है चित जिनके असे सत्पुरुष हैते परम हीत देनेकौ

आणाभंजणकीडा॥ ८९॥ अ॰॥ जे जिय संसारतै भयभीत है। तिनके जि
नराजकी आज्ञा भंग करणेका भय होय है॥ बहुरि जिनके संसारका भय नाहि
तिनकै जिन आज्ञा भंग करणा ख्याल है॥ गाथा॥ काउ आणंदोसो संजुअसुहि
या णंधयणाण॥ प्रधिद्धि कम्माणजउ॥ जिणाविलद्धो अलंद्दनि॥ ९०॥ अर्थ॥
जो जिनवाणीका रस मझने बालन बुद्धि नष्ट होय॥ अन्यथा आचरण करै तो॥ जि
नकै शास्त्रज्ञान नाही तिनको कहा दोष दिजिए तातै कर्मनिके उदयका धिक्का
र होउ धिक्कार होउ॥ जातै जिनदेव पायातीन पायासमान होय है॥ भावार्थ॥
केइ जैनिकुलमै उपजे जिव नाममात्र जैनि कहावे है॥ परंतु जिनदेवका यथार्थ
स्वरुप जानते नाहि॥ बहुरि केइ शास्त्राभ्यास बी करै है परंतु निकउपयोगलगय

कहै॥ तिनके सम्यग्दर्शन नाही तौ घरके व्यापारमै तत्पर जो ग्रहस्थ॥ तिनकि है मा
इ हम कू हा कहै॥ तिनकै सम्यक्त होना महादुर्लभ है॥ भावा॥ केइ जिव आपकौ स
म्यक्ति मानै है॥ अभिमान करै है तिनको कह्या है॥ जो पंचमहाव्रतके धारि मुनि नी
आपापरके जाने विना द्रव्यलिंगी होरहै है॥ सो ग्रहस्थन कि कहा वातै जिनवाणीनै
के अनुसार तत्व विचारमै उद्यमी रहना योग्य है॥ थोडासा ज्ञानी करी आपको स
म्यक्ति मानि प्रमादि होना योग्य नाहि॥ गाथा॥ णउ यंग पर को बाजउ॥ जियउ सू
न मानासणं विहियं॥ ना बुडु सिणी भंते॥ णिरत्थं यं तव कुडाडो वं॥ ९१॥ अर्थ॥
ज्या के कछु आपका भि हित नाही॥ ऐसा सूत्र उलंघी वचन कहता तू ने और भ्याने
हे जिव सुनि सदेह हि संसार समुद्र विषै डुब्या तेरा तपश्चरणादिकका आडंबर व

३ छै है॥ गाथा॥ महामिथ्यादृष्टिनकैं नीशंजनंता निर्मलहो उपदेसदेयहे॥ पैरवा
कानलोहोनाभव्यवनगयवे अधिनहे॥ गाथा॥ अहवो सरलसहावो॥ सुअणा
सवत्थहुनिअविययव्या॥ छंदं निविपत्तए णविकुणं॥ तिरुरुणं दुज्जीहाणं॥
६७॥ अर्थ॥ अथवा सरलस्वभावि सज्जन पुरुषहे॥ ते सब विषे समानभावहै॥ का
हुकाबुरा नाहि चाहेहे॥ विषके समूहकौं उलघता जो सर्पतीनकौं भीदयाहीकरे
हे॥ सो एसा सज्जनपना सम्यक्तिनकौं होयहै॥ जो सम्यग्दर्शनका होना दुर्लभ दीषा
वेहै॥ गाथा॥ गिहवावार विमुंके॥ बहुमुणीलए विणथिसमनं॥ अलवणाणिल
याणं॥ उहणंजाय चिन्नणिमो॥ ६८॥ घरके व्यापरकरि रहित ऐसे मुनिन मे उं॥
म्यग्दर्शन नांहीं तौ घरके व्यापारमें तत्पर जो यहस्थ॥ तिनकौ हे भाइ हम कहावे

पाणव्वेय विधिराउ॥ सूतं नाणं नासीती॥ ६९॥ अर्थ॥ जे जिव जिनसूत्रकौं उ
लघी उपदेश देयहे॥ तिनकौं सम्यग्दर्शनादिककी प्रा सिरूपजो बोधताकानां
स होयहै॥ बहुरि अनंतसंसार रैंटहे तातैं प्राणनास होतेंभि धिरपुरुषहे ते जि
नसूत्र उलंघिन हि बोलेहे॥ गाथा॥ मुहाणरंजण थअवि॥ हियसंसा यां वि
णकरिज्जं॥ किंकुलवहूणोकट पसविथुणं॥ तिवेसाणचरियाउ॥ ७०॥ अ
मुर्खनके रिझायवेके अर्थ मिथ्यादृष्टीनिके विपरितीआचरणकी प्रसंसा
कदाचित भी करणा योग्य नाहि॥ जातें कुलवधू है ते कहा कहुं भी वैस्यानि
के चरित्रनिकी प्रसंसा करे है॥ अपितु नाहि करे है॥ गाथा॥ जिणआणा
भंगभयं॥ भवसयभी आणहोइ जीवाणं॥ भव भय अनिरुयाणं॥ जिण

जो जिव आपकि बडाइ आदिके अर्थ धर्म शेवे है। तिनकि उलटि कुबडाइ होयहै। और कषायके होनेतें धर्म भी नहि होयहै। तातें निरापक्ष धर्म सेवना योग्य है। गाथा। इयरजणसंसणए थिइं। उस्सूत भासिए ण भयं। हाहा ताण णराणं। दुहइ जइ मुणइ जिणणाहे ॥ ५२ ॥ अर्थ। जिनके और जिवनिकी प्रसंसाके अर्थ जो समस्त जनमीसे भला कहे। याके अर्थ जिनसूत्रकों उलंघी बोलने में भय नाहि तिन जिवनकूं धिकार हो हु। हाय हाय तिन जिवनीको परभव मे जो दुष होय है। ताको जाने तो कवलि जाने। भावार्थ। थोडे से दीननिकी मानबडाइ के अर्थ अन्य मुर्षनिके कहे तें जो जिनसूत्र के अनुस्वार यथार्थ उपदेश देना योग्य है। गाथा। उस्सूत भासीयाण। बोहीणासो अणंतसंसार

के मोलिको कल्पवृक्ष और चिंतामणी न पावे है। सत्पुरुष कल्पवृक्षादिके तें भी बडे है। गाथा। लज्जं तिजाति मोहसप्पुरिसा निरुपम महग्घेणं। पुणे सिद्धि लाभं। अम्हाण गलंति कम्माइं ॥ ५४ ॥ अर्थ मै जानु हुं के जे पुरुष जिन धर्मिनका शुद्धाचरण करे है। तिनके नाम लेते मोह लाजे है मंद पडे है बहुरि तिनके गुण भावनेमे तें हमारे कर्म गले है। भावार्थ जिन धर्मिनके नाम लेने ते जिवनका कल्याण होय है। गाथा। आणारहियं कोहादिसं जुयं अप्पसंसणटंच। धम्मंसेवंताणं। णय कित्ती णेय धम्मं च ॥ ५५ ॥ अर्थ जिनराजकि आग्या रहित क्रोधादि कषायनिकरी संयुक्त आपकि प्रसंसा के अर्थ धर्म सेवे है। तिनके यस कीर्ति नै होय है। और धर्म भी नै होय है। भावार्थ

इ गुणरासी ॥४९॥ अर्थ ॥ जहां जैन सिद्धान का ज्ञान पहरस्थ तो असमर्थ है ॥ अर आज्ञा निजनसामर्थ सहित है तहा धर्म वैठे नाहि धर्मामाजी व ष्पराम व अनाद रहीपावे है ॥ भावार्थ जहा कोउ जिनवाणी का मर्म न जाने तहा रहना उचीत नाही ॥ गाथा ॥ जणवरइ अइ जाद ॥ अमगासवी समत्थउ धर्म्म तालह अहकुज्ञना पीडइ सुद्ध धम्मत्थी ॥५०॥

गाथा ॥ नजयइ पुरिसरयणं ॥ सुगुणदेहं मगीर महाग्घं ॥ जस्सासयमिसेव

इ सुविहीरउ सुद्ध जिणधम्मं ॥५२॥ अर्थ ॥ जाके आश्रय भले आचरण मे तिस र पुरुष निर्मल जिन धर्म को सेवे है ॥ सो पुरुष निविषे रत्न समान उत्म पुरुष जयवंत है ॥ कैसा है सो पुरुष निर्मल जिन धर्म ॥ भले सम्यग्दर्शनादि गुणनि का धारि है ॥ बहुरि सुमेर गिरसमान है वडा है मोल जाका ॥ भावा ॥ ज्याके सहाते जिन धर्मो धर्म सेवे है ॥ सो पुरुष धन्य है जाने साधर्मिनने निराकरण योग्य है सो सम्यक्त का अंग है ॥ गाथा सुरनरु चिंतामणीणं ॥ आधं णल्ह हंनितस्स पुरिस्स ॥ जो सुविहिरयजणाणं ॥ धम्माधारं सदादेइ ॥५३॥ अर्थ ॥ जो पुरुष उत्ता ज्या स आदि भले अचरण करणवाले जीवनी को सदा काल धर्मो धार दे यहै ॥ उनके निर्विघ्न शास्त्राभ्यासादि होय तेसे स्थान मिलावे है ता पुरुष

थ्यादृष्टिनकासंगतिहोतैसेतैदीनदीनप्रतिअविनपुरुषनिकानीहीन
होयहै॥भावा॥जैसीसंगतीमिलैतैसाहिगुणनिपजेहै॥तातेअधर्मिनकी
संगतिछोडिधर्मात्मानिकीसंगतिकरणा॥यहुसम्यक्तकामुलकारणहै॥
गाथा॥जोसेवइसुद्धगुरु॥असूद्धलोय्यणसामहाइआतू॥तम्हानाणसयासे
वलिरहिउमवसिज्झासु॥८८॥अर्थ॥जोपुरुषबाह्यअभ्यंतरपरिग्रहरहि
तसूद्धगुरुनिकासेवेहै॥मिथ्यादृष्टिनीकामहाझगुंहै॥तातेतिनमिथ्यादृ
ष्टीनकेनिकटवलरहितमनिकसहु॥भावा॥जातैजैममिथ्यादृष्टिनकाघना
जोरहोयतहांधर्मात्माकोरहनायोग्यहै यहुउपदेशहै॥गाथा॥समडविडेअ
समथा॥सुसमस्थालथजिणमइअविडे॥तथेणबडइधम्मा॥परावलंलह

मिछत्तविझालचंजेणबुडुंति॥८६॥अर्थ॥केइजिवधर्मअर्थिनणसंत
कष्टकष्टकरेहै॥आत्माकोदमैहै द्रव्यकोत्यागेहै॥परन्तुएकमिथ्यात्वविषके
कणिकाकोनत्यागेहै॥जाकरिसंसारविषैडुबेहै॥भावा॥केइजिवधर्मकि
वांछाकरिउपवासादिककार्यकरेहै॥परंतुयथार्थदेवगुरुधर्मकाजिवा
दिककीश्रद्धाकाकीकछुटीकहिनाही॥तिनकेकह्याहै॥जोसम्यक्तविनास
र्वकार्ययथार्थफलनाहिदेयहै॥तातेश्रद्धानिश्चलकरणीयोग्यहै॥गाथा॥
सुद्धविहधम्मराउ॥घटइसुद्धाणसंगमेसम्माण॥सोविअत्सुद्धसंगेणाउ
णणविगलइअएदीहै॥८७॥अर्थ॥निर्मलश्रद्धावानसज्जननकीसंगति
होतेसंतनिर्मलआचरणसहितधर्मानुरागबढैहै॥बहुरिसोहिअसुद्धमि २७

पक्षपातके वासते सुगुरु कहे है॥ अरु पापरूप दिवसकों पुण्यरूप मानें है
सो जिव मिथ्यादृष्टि है॥ आगे धर्मकार्यनीअज्ञार हितकरै है तामे दोषपदि
पावै है॥ गाथा॥ किच्चं पि धम्मकिच्चं पूयापमुहं जिणंदआणाए॥ भूअमणु
गहरहियं॥ आणाभंगादु दुहदायं॥ ४५॥ अर्थ॥ करणेयोग्य जो पुजा
आदि धर्मकार्य ताभि जिनेंद्रकि आग्याप्रमाण है॥ अयथार्थ करणयोग्य
है॥ जो ते यत्नाचारतें रहित कार्य है सो अज्ञानंग होनेतें दुषदायक है॥ भाव
र्थ॥ पूजाआदि कार्यका विधान जैसे जिनवाणीमे कह्यो है॥ ताहि प्रमाणय
त्नाचार सहित करणे योग्य है॥ अपणी बुद्धिते यद्वातद्वा करणे योग्य ना
हि॥ गाथा॥ कटं करोसि अप्पं दमेसि॥ तिदव्वं चयंसि धम्मत्थी॥ एकं न चयंसि

१४ गोदादिकमे जिव अनंत मरण पावै है॥ तातें सर्पका ग्रहण करणा तो भ
लोपण कुगुरुका सेवना भला नाही॥ आगे लोकनकी अज्ञानताको दोष
वै है॥ गाथा॥ जिणआणा विच यंता॥ गुरुणोभणीऊण जेण मिझंति॥ ताकिं
करिउ लोउ॥ ललाउ गाडुरिपवाहेण॥ ३८॥ अर्थ॥ जिनराजकी आज्ञा तो
यह जो कुगुरुनका सेवन मतिकरो॥ ताकों भी त्यागकरि अरु जो कुगुरु नि
कौं गुरु कहे नमस्कार करे है॥ सो लोक कहा करै गाडुरि प्रवाह करि ठगा
या॥ भा॥ जैसे एक गाडर कुवामे पडे ताकै पिछे और भी पडतिजाय॥ को
उ विचारे नाहि॥ तैसे अज्ञानि पुरुष कोउ एक कुगुरुकों मानै ताके अनु
स्वार सब हि मानै॥ कोउ गुणदोषका निर्णय करे नाहि॥ यहि आज्ञानका

॥अर्थ॥ सर्पकोदषिकरि लोकदुरि भागेहे॥ तासेंतोइकछुभी कहेनाहि बहुरि जाकुगुरुकात्यागकेरे तासेंहायहाय मुढजनदुष्टकहेहै॥ भावार्थ॥ सर्पतेभी अधिकदुषदाइ कुगुरहै॥ सो सर्पकोत्यागे तासेंतो सवजन लोक है अर कुगुरुको त्यागे तासें मुरषजीव नुगरा कहेहै॥ दुष्टकहे यह बडा पेद षिवालहे॥ आगेकहेहै जोसर्पतेंभी अधिक दोष कुगुरुनमें कहाहै ताको कहेहै॥ गाथा॥ सप्पोइक्कं मरणं॥ कुगुरु अणंताइ मरणाइ॥ तोवर सप्पं गहियं॥ माकुगुरु सेवणं भद्दं॥३७॥ अर्थ सर्पतो एकहि मरण देइयेहै॥ जो कदाचित सर्पडसेतो एकहि वार मरण होय॥ बहुरि कुगुरुहै तिनसें अनंत वार मरण होयहै॥ कुगुरुके प्रसंगते मिथ्यात्वादिक पुष्टहोनेते नि

२८ जेनिगोदनीका अतिपापका महानमहे॥ भावार्थ॥ इस निकृष्टकालमैं जोग्य हिनजिव उपजेहै॥ तिनकौ जिनधर्मकि प्राप्ति दुर्लभ तातेजिनधर्मकि विरलताहिहैहै किछु धर्महिनताहिहै॥ अर्थ॥ धम्मम्मि जस्समाया मिच्छं तमाहाउसुत्ती णसंका॥ कुगुरु पिकरउ सुगुरु॥ दिउस्सो विसयापुणोत्ति॥३८॥ अर्थ॥ जाजीवके धर्मविषैतो माया कहिकहिए छलहै॥ जाकी छधर्मका अंगसेवेहै॥ तामें अपकीष्यन लाभपुजाका आसयराषैहै॥ बहुरि ज्याके मिथ्यात्वके अर्थ गाथाहे॥ भावार्थ॥ गाथासूत्रनिका यथार्थ अभिप्राय तोनजानेहै॥ उलटा मिथ्या अर्थ ग्रहण करैहै॥ बहुरि उत्सूत्र कहीए सूत्र सीवाय बोलनेमें जाके संका नाही यहातहां कहेहै॥ बहुरि कुगुरुनिकु

२५ वा हिंसो वहे तोसे धीटहे ॥ बहुरि धर्मा मानेते कुदेष पराषेने ते दुष्टहे ॥ भावार्थ
कुगुरु आपणा मिथ्यात्वने पोषे भोले जीवनिकों ठग करि कुगति ले जाय है ॥
॥ गाथा ॥ कुगुरु विसरसी मोहं जे सिमोहइ चंडि माहइं ॥ सुगुरु णाउ चरि
त्तति ॥ अउ णिव डाहोइ नवाणं ॥ ४१ ॥ अर्थ ॥ जिनके मिथ्यात्वादिक मो
ह का तीव्र उदय है ॥ तिनकै कुगुरु निकी भक्ति वंदनारूप अनुराग होय है ॥
बहुरि बाह्याभ्यंतर परिग्रह रहित जे सुगुरु तीन उपरि भव्य जीवनि कौ ती
व्र प्रीति होय है ॥ भावार्थ ॥ जैसे जिवकि प्रीति जैसे हीं जीव से है ॥ ताते जे ति
ष्र मोहि कुगुरु है तिनसे मोहि जीवनि की प्रीती होय है ॥ अर वितरागी
गुरुन से मन माहि जीवनि की प्रीति होय है ॥ ऐसे जानना ॥ गाथा ॥ जह ज

ह तुदेइ धम्मो ॥ जह जह दुट्ठाण होइ अइउदउ ॥ सम्म दिट्ठि जियाणं ॥ तह
तह उल्लसइ सम्मत्तं ॥ ४२ ॥ अर्थ ॥ जैसे जैसे धर्म हीन होय है ॥ अर भी
जैसे जैसे दुष्टनका उदय होय है ॥ तैसे तैसे सम्यग्दृष्टी जीवनिका स
म्यक्त्व हुलसाय मान होय है ॥ भावार्थ ॥ इस निकृष्ट काल में जिनधर्म की वि
रलता ॥ अर मिथ्यादृष्टिन कि संपदा का उदय देषि करि दृढ श्रद्धानि के त्य
ह भाव नै होय है ॥ भगवान ने ऐसे कहिया है ॥ गाथा ॥ माजइ जं तुज णाणी
तुद्धे ॥ अइ उदय जय जिण मइ होइ ॥ तं कि दकाल संभव जियाण ॥ अउया
वमाहप्पं ॥ ४३ ॥ अर्थ ॥ जो षट काय जिवनि कि रक्षा करने कौ मासा समान
जिनधर्म ताविषे अत्यंत उदय न हि होय है ॥ सो इस निकृष्ट काल मे उप

महामै है ॥ गाथा ॥ निद्दुक्खिणो लोउ ॥ जइ कुवि मग्गोइ रुद्दियारवंडं ॥ कुगु
रुणा संगवयणे ॥ दक्खिणं हा महा मोहो ॥ ३९ ॥ अर्थ ॥ लोकोइ रंटीकादु
कमांगै तो बहु लोक मै प्रवीन नाहि गहलाक हावै है ॥ अर कुगुरु नाना
प्रकार के परिग्रहन की याचना करै तामै भी प्रवीन पना ठहरावै ॥ सो हाय
हाय यहु मोह का महमा है ॥ गाथा ॥ किं भणिमो किं करिमो ॥ ताण हयासा
ण धिट्ठ दुट्ठाणं जो दंसेउण लिंगं ॥ खिवंति नरयंमि मुद्ध जणं ॥ ४० ॥
अर्थ ॥ आचार्य कहै है तिन कुगुरुनसै हम कहा कहै ॥ अर करै जो लिंग कहि
ए भेष ताहि दिषाय करि भोले जीव को नरक विषै षेपै है ॥ कैसे है ते
कुगुरु नष्टबुद्धि है ॥ कार्य आकार्य के विवेक रहित है ॥ बहुरि लज्या रहित

१२ को छिपावै है ॥ भावार्थ ॥ धर्म का स्वरूप गुरुन का उपदेश तै जानिये है ॥ बहुरि
जे गुरु कहावै है ॥ ते इस काल विषै आप निमह्निमा के आसक्त भए संतै यथा
र्थ धर्म का स्वरूप कहै नाहि ॥ तातै जिन धर्म की विरलता इस काल मै भई है
सव्वो वि अरहदेवो ॥ सुगुरु गणाइ णाम मित्तेण ॥ ते सिसरुव सुहयं पुण
विहुणा ण पावंति ॥ ४१ ॥ गाथा ॥ अर्हंत देव अर निर्ग्रंथ गुरु औसा तो नाम
मात्र करि सर्व हि कहै है ॥ परंतु तिन का यथार्थ स्वरूप भाग्यहीन जीव है ते
न पावै है ॥ अर्थ ॥ नाम मात्र करि तो अर्हंत देव ॥ निर्ग्रंथ गुरु स्वेतांबरा
दिक भी कहै है ॥ परंतु जिन का यथार्थ स्वरूप जानै नाहि तातै जिन वानि के
अनुसार अवश्य निश्चय करणा ॥ इस कारण मै भोला रहणा योग्य

विषेडुबेहै॥भावार्थ॥दातातो अपणेमानपोषनेके अर्थदेयहै॥अरलेनवा
लालोभितहाय अपणे दाताके गुणभाटकिल्पोगायगायदानलेयहै॥
सो मिथ्यात्वकरवायके पुष्ट होनेते दोनुहि संसारमे डुबेहै॥बहुरि पंचमका
लकहनेका अभिप्राययहुहै॥जो अन्यमतमे ब्राम्हणादिक ऐसे दानले
नेवाले तौ आगेभी थे॥परंतु जिनमतमेभी केई वेषधारी भाटवत दानलेनेवाले भ
एहै सोइसनिकृष्टकलिहीमे भएहै॥ऐसा जानना॥गाथा॥मिछ्छवाहे
रंतो॥लोउपरमथ्थजाणउथवो॥गुरुणोगारवरसी॥यासुहमगानिगु
हंति॥३२॥अर्थ॥मिथ्यात्वके प्रवाहविषे आठाक, जोलोक, ताविषे परमार्थ
केजाननेवाले थोडे है॥जाते गुरपदके अपनी महिमाके रसीक तेसुहमार्ग

लक्ष्मी जीदोयप्रकारहोयहै॥एक लक्ष्मीतो पुरुषनिके भोगनिमीत्तते भगन
तेपापके योगते सम्यक्तादिगुणरूप रिद्धिकानासकरैहै॥बहुरि एकलक्ष्मी
दानपुजामेलगे॥अरपुण्यके योगते सम्यक्तादिगुणनिको हुलसायमानक
रैहै॥पात्रदानादिक धर्मकारजहीमेलगे सो सफलहै॥अहु तासर्यहे अ
गैकेइदानभिदेयहै॥परंतु कुपात्रके योगते सो भी निफलजायहै ऐसा दि
षावेहै॥गाथा॥गुरुणोभदाजाया॥सद्दे थुणीउणलिंतिदाणाइ॥दुणीवि
अमुणीअसारा॥हुसमसमयम्मिवुडुंति॥३३॥अर्थ॥पंचमकालविषे गुरु
तोभाटभए॥जो सब्दनिते स्तुतिकरिके दानलेयहै॥सोए देनेवाले अरलेनवा
लेदानोहि नहि नाहिजान्याहै जिनमतकारहस्यजाने॥ऐसा संसारसमुद्र ११

होयहै ॥भावा॥ जे तिव्र मिथ्या द्रष्टी है॥ तिनके धर्मके निमित मिलतैभी
धर्मबुद्धि न होयहै॥ अर जे द्रढ श्रद्धानि है तिनके पापका निमित मिलतै
भी पापबुद्धि न होयहै॥ तातै भोले जिवनिकै भी जो जैसा निमीत मिलै तैसा
परिणाम होयहै सोइ कहैहै॥ गाथा॥ अइ सय पावियपावा॥ धम्मिय पव्वे
सु तेवि पावरया॥ ण चलंति सुद्ध धम्मा॥ धण्णा किवि पाव पव्वेसु॥ २९॥
अ॰॥ जे अंसयत पापि जिव है ते धर्मके पर्व निविषै नचलायमान होयहै॥
अगे धनका निमतके वसतै गुणदोषका कारण दीषावैहै॥ गाथा॥ लछि
विहव इदु विहा॥ ण गा पुरिसा ण स्व वइ गुणरिद्धि॥ णणायउल्लसंति॥ अ
पुण्णपपुण्णप्पभावाउ॥ ३०॥ अर्थ॥ लक्षिमी दान पूजा मे लगे॥ अर पुण्य

बडा अश्वर्य है अग कोउ स्वामि नाहि॥ हम कौनसे पुकार करै॥ जिनवैन
तो कौन प्रकार है॥ अर सुगुरु कैसे है॥ और श्रावक कौन प्रकार है यहु अ
कार्य है॥ भावा॥ जिनमतमै तो तिलके तुसमात्र परियह रहित श्रीगुरु क
है है॥ अर सम्यक्ता दि धर्मके धारि श्रावक कहै है॥ बहुरि अवार उस पंचम
कालमे ग्रहस्थ सै भी अधिक परियह राषै है॥ अर पापको गुरु मनावैहै॥ ब
हुरि देवगुरु धर्मका न्याय अन्याय कातौ कछु टीक नाही॥ अर आपको श्रा
वक मानै है॥ सो यहु बडा अकार्य है॥ कोउ न्याय करणवाला नाहि॥ कोनसे
कहिए॥ ऐसे आचार्य निषेद करिकह्यो है॥ गाथा॥ सप्पे दिट्ठे णासइ लो॥
उ ण हु किंपि कोइ अक्खेइ॥ जो चयइ कुगुरु सप्पं॥ हा मुढा भणइ तं दुट्ठं॥ ३१॥

नाहि ॥ गाथा ॥ सुद्धा जिणआणरया ॥ केसी पाव णा दुति सीरसुलं ॥ जे सी तेसी रसुलं ॥ केसी मूढा णंते गुरुणं ॥ ३४ ॥ अर्थ सुद्ध जिनराज कि आज्ञामें तत्पर पुरुष हे ॥ ते केइ पापीन के सिरसाले हे ॥ यथार्थ जिन धर्मि के आगें मिथ्या दृष्टीन का मन चलने पावे नाहि ॥ ताते वइन को अनिष्ट भासे है ॥ वहुरि केइन के तो मुरष गुरु नाहि जिनके ते सिरसूल हे ॥ भावा ॥ जे जिव मिथ्या दृष्टिन को गुरु मानें हे श्रद्धानि हे ॥ तो इनकु ते कू गुरु यथार्थ मारगके ॥ लोपने वाले अनिष्ट भासे है ॥ जो इनका संजोग जिवन को मति होउ ॥ गाथा ॥ हा हा गुरुय अकज्ज सामी ण हु ॥ अथिक स्स पुक्करिमो कह जिण वयण कह सगुरु ॥ सावया कह य उ दि अकज्जं ॥ ३५ ॥ अर्थ हाय हाय

९

स है ॥ अर सोइ ज्ञान है जा करि जिव सम्यक मीथ्या भाव को जानें ॥ अर गुरु का स्वरुप जानें ॥ लोक रित धर्म का रुप जानें ॥ भावा ॥ जिन करि हित जाने हि असे जे ते शास्त्र हि सुननां ॥ जो अन्य रागादिक बढावने वाले मिथ्या शास्त्र श्रवण करण योग्य नाहि ॥ गाथा ॥ जिणगुणरयणमहाणि ॥ हि उहुण वि किं ण जाइ मिछत्तं ॥ अह पत्ते वी णिहाणे ॥ किवणाण पुणो वि दारिदं ॥ ३६ ॥ अर्थ ॥ जिनराज के गुणरूप वडो रत्न को भंडार पाय करि भी मीथ्यात्व कों केसे न जाय है ॥ एहु अश्चर्य की वात है ॥ अथवा निधान पाय के भी फेर कृपण पुरुषन के दालिद्र रहे हि है ॥ यामें कहा अश्चर्य है ॥ भावार्थ ॥ जिन राज को पाय करि भी मीथ्यात्व न हि जाय है ॥ सो वडा आश्चर्य है ॥ अथवा जाका भला हो

ताते जिन-आज्ञा विषै परायण जो पुरुष॥ ताकरि बाह्य अभ्यंतर परिग्रह रहि-
त निर्ग्रंथ गुरुनिके निकट शास्त्र श्रवण करणा योग्य है॥ अथवा वैसे गुरु-
निका संयोग न होय तो तिस निर्ग्रंथ गुरु के उपदेश का कहनेवाला जो
श्रद्धानी श्रावक ताते धर्म श्रवण करणा योग्य है॥ भावार्थ॥ शास्त्र श्रवण
कि पद्धति राखणे के अर्थ जिस तिस के मुख शास्त्र न सुनना॥ के तो निर्ग्रंथ
आचार्य के निकट सुनना॥ के ताहि के अनुसार का कहनेवाला श्रद्धानी श्रा-
वक ताके मुख सुनना॥ नव हि समार्थ प्रधान रूप फल शास्त्र श्रवण ते उ-
जै है॥ गाथा॥ सकहा सो उवएसो न णं णं॥ जे णजाण बुज्जिवा॥ सम्मत्त मि-
छ भाव गुरु॥ अगुरु होय धम्म दिट्ठी॥ २६॥ अर्थ॥ जो कथा है सो हि उपदे-

९० होइ मिछ पवाओ॥ जैसी अणु संगाउ॥ धम्मीण विहोइ पाव मइ॥ २७॥ अर्थ॥
जातै मिथ्यात्व के पर्व जे होरि दिवाली दसहरा संक्रांति जा विषै अधिक
जलादिक की हिंसा होय॥ वा ऐसा एकादसी आदि पर्व जामे कंदमूलादि-
क का भक्षण होय॥ इत्यादिक मिथ्यात्व के पर्व जानेरचे ताका नाम भी पाप
बंध का कारण है॥ ताते तिन मिथ्या पर्वनि के प्रसंग ते धर्मात्मा निके भी पा-
प बुद्धि होय है॥ धर्म्मात्मा निके भी देखादेखि चंचल बुद्धि होय है॥ गाथा॥
मज्झे ह्न निउ पुण एसा॥ अणुसंगेण हवंति गुणदोसा॥ उक्किट्ठ पुणपा-
वा॥ अणुसंगेण णाधिप्पंति॥ २८॥ अर्थ॥ या प्रकार गुण अर दोष प्रसंग
ते होय है॥ ते मध्यम स्थिल रूप होय है॥ जाते उत्कृष्ट पुण्य पाप प्रसंग ते न॥

णहारनाहि॥ताकाश्रेसाहिस्वभावहै॥श्रेसेजाणकरिसंतोषकरणा॥
आगेसम्यक्तहोणकाकारणधर्मपर्वजिननेस्थापेतिनकीप्रसंसाकरैहै॥
गाथा॥सोजयउजेणविहिआसं॥वछरचाउमासीअसुपव्वा॥णिद्धंधपाण
जायइ॥जस्सपहावाउधम्ममइ॥२६॥अर्थ॥सोपुरुषजयवंतहोउजानसंव
त्सरअरचातुरमासीककहिणदसलक्षणअष्टान्हीकादिकधर्मकाप
र्वनिरमापेजीनपर्वनकप्रभावतेमुर्षनकेभीधर्मबुद्धिहोयहै॥महाआरं
भीभीदसलक्षणीआदिपर्वनिरमापेविषेजिनमंदिरजायहै॥धर्मसवे
है॥तातेधर्मपर्वकाकर्तापुरुषधन्यहै॥आगेमिथ्यात्वकेप्रबलकरणेवालेप
र्वजिननेरचेतिनकीनिंदाकरैहै॥गाथा॥णंमंपितसुअसुद्धु॥जेणाणिदि

रिकेउपदसंतेअपुकेश्रद्धानादिकमलिनहोनेतेवडिहानीहोयहै॥गाथास
यणाणवामोहेल्ला॥अधिप्पंतिअत्थेल्लोहणा॥णेधिप्पंतिसुधम्मरम्मा॥हा
मोहमाहप्पं॥२७॥अर्थ॥संसारिजिवहैतेप्रयोजनकेलोभकरिपुत्रादिकस्व
जनिनकामोदकोग्रहणकरैहै॥श्ररअथार्थजिनधर्मकोअंगीकारनाही
करैहै॥सोहायहायऐहुमोहकामाहातमहै॥भावा॥समस्तजिवअपकूसुषी
चाहैहै॥परंसोसत्यहूकरैहै॥सोयहुमोहकामहातमहै॥सुषकाकारणजो
जिनधर्मताकोनसेवैहै॥अरपापवंधकेकारणजोपुत्रादिकतिनसोस्नेहक
रैहै॥सोयहुमोहकामहातमहै॥गाथा॥गिहावावारपरिस्समशिवणाण
णाराणवीसमहाणं॥णगणहोइरमणी॥आणेसिजिणंदवरधम्मा॥२०॥ ७

अर्थ ॥ मीथ्यात्वका तिव्र उदय विषै निर्मल सम्यक्तका कहना भि दुर्लभ है ॥ जैसे पापिराजाके उदयविषै न्यायवान राजाका आचरण दुर्लभ है ॥ भावा ॥ इस निकृष्ट पंचमकालमै मिथ्यादृष्टिनका तिव्र उदय है ॥ ताते अब यथार्थ कथन करनेवाले भी दुर्लभ है ॥ आचरण करनेवालेनकि तौ कहा कहिये ॥ गाथा ॥ बहुगुण विज्जाणि ॥ लउ उसूत्र भासी तहा भी मुत्तव्वो ॥ जह वरमणि जुत्तो विहु विग्घयरो विसहरो लोए ॥ २८ ॥ अर्थ ॥ सूत्रको उलंघी उपदेश देनेवाला पुरुष बहुत क्षमादि गुण ॥ अर व्याकरणादि विद्यानिका स्थान होय तो भी त्यागनायोग्य है जैसे विषै सर्प श्रेष्ठ मणी करि सहित भी विघ्नकाकर्त्ता है ॥ भावार्थ ॥ विद्यादिक चमत्कार देषि करि भी कुगुरुनका प्रसंग करणा योग्य नाहि ॥ जाते ये थाचा

९ होकरे है ॥ परंतु आज्ञानीनौ असा सम्यक्त पनाते नरक जाय है ॥ अर ज्ञानि भेद विज्ञानके बलते कर्मनिका नाश करि सुषी होय है ॥ २७ ॥ गाथा ॥ जिणमय कहाय वधा ॥ संवेग करो जियाण सव्वो वि ॥ सवेगो सम्मत्ते ॥ सम्मत्तं सुद्ध देसणया ॥ २८ ॥ अजिनभाषित कथाका प्रबंध है ॥ सो सर्व ही जीवनके धर्ममे रुचिरूप संवेगका कर्ता है ॥ परंतु सम्यक श्रद्धान होते संते संवेग होय है ॥ बहुरि सम्यक श्रद्धान शुद्ध गुरुके उपदेशते होय है ॥ भावार्थ ॥ शुद्ध गुरुका मुषते जिनसूत्र सुणै तौ श्रद्धानपूर्वक धर्ममे रुचि होय ॥ अश्रद्धानिके मुषते शास्त्र सुणै तो श्रद्धानौ निश्चल होय नाहि ॥ असा तात्पर्य है ॥ गाथा ॥ तं जिण आणपरेणा ॥ धम्मो सो अव्व सुगुरुपासंमि ॥ अह उ विउ सदाउ तस्सा ॥ वएस स्स कहगाउ ॥ २९ ॥